पंचतंत्र की कहानियाँ

सुरेश वशिष्ठ

जीवन ज्योति प्रकाशन
दिल्ली-110 006

प्रथम संस्करण : 1999

प्रकाशक : जीवन ज्योति प्रकाशन
3014, चर्खेवालान, दिल्ली-110006

मूल्य : 50 00 रुपये

आवरण : सुप्रिया कालरा

शब्दांकन : उमेश लेज़र प्रिंट्स, दिल्ली-32 (फोन :2289974)

मुद्रक : तरुण प्रिंटर्स , शाहदरा, दिल्ली-110032

अनुक्रम

दमनक और करकट

दक्षिण के वर्धमान नामक एक बनिये ने अपने श्रम और चातुर्य से बहुत अधिक सम्पत्ति पैदा कर ली, परन्तु इतने पर भी उसे संतोष न था। वह और अधिक धन कमाना चाहता था। इसी सन्दर्भ में सोचते-विचारते वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि उसे सुगन्धित द्रव्यों का व्यापार करना चाहिए।

इसके लिए उसने मथुरा जाने का निर्णय लिया और शुभ मुहूर्त देख अपने काफिले को लेकर चल पड़ा।

उसके पास संजीवक और नन्दक नामक बैलों की एक सुन्दर जोड़ी थी, उसे गाड़ी में जोत बड़े गर्व और हिम्मत के साथ वह चला जा रहा था। यमुना के कछार पर पहुँचा तो संजीवक की फिसलने से टांग टूट गई और वह मृतप्राय हो गया। वर्धमान ने तीन दिन तक उसके उठने की प्रतीक्षा की परन्तु उसे सफलता न मिली।

यह जंगल का रास्ता था, साथियों ने समझाया कि चोर, लुटेरे यदि यहां काफिले को लूट लेंगे तो तुम क्या करोगे? एक बैल के पीछे सारी सम्पत्ति को गंवाना ठीक नहीं। वर्धमान संजीवक को बहुत प्यार करता था, परन्तु जब उसके साथियों ने जोर दिया तो संजीवक को वहीं छोड़ काफिला चल पड़ा। बनिये ने तीन सेवकों को संजीवक की सहायता के लिए वहीं छोड़ दिया परन्तु जंगल में हिंसक जानवरों के डर से सेवक भाग खड़े हुए और जाकर कह

दिया कि बैल ने दम तोड़ दिया है।

इत्तफाक कहें कि वहाँ पड़े संजीवक में प्राणदायक वायु के सेवन से कुछ बल-संचार हुआ और वह उठकर खड़ा हो गया और यमुना किनारे की स्वच्छ शीतल वायु में हरी-भरी घास खाकर कुछ ही दिनों में पूर्णतः स्वस्थ हो गया। जंगल में खुला चरकर मस्त हो गया और उसकी एक दहाड़ से जंगल का पत्ता-पत्ता काँपने लगा।

उस वन में पिंगलक नामक एक शेर रहता था। वही वहाँ का राजा था। एक रोज, अपने सेवकों के साथ वह यमुना के तीर पानी पीने आया। उसने संजीवक की दिल दहला देने वाली दहाड़ सुनी तो काँप उठा। आज तक सुनी पशुओं की आवाज से बिल्कुल अलग तथा कानों को भेदने वाली ऐसी दहाड़ पहले कभी उसने नहीं सुनी थी। मारे डर के वह प्यासा ही जंगल में भाग चला।

पिंगलक शेर के करकट और दमनक दो पूर्व मंत्री थे। वे दोनों अपने पद को पुनः पाने के लिए अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे। अपने राजा को वृक्ष के नीचे चिन्तित मुद्रा में बैठे देखा तो विचार किया कि राजा के दुःख को पूछना चाहिए। करकट ने दमनक को समझाया भी कि दूसरे के कार्य में बिना प्रयोजन प्रवृत्त होने वाला व्यक्ति कीली को उखाड़ने के रूप में अपनी मृत्यु को निमन्त्रण देने वाले वानर के समान विनाश को प्राप्त होता है। करकट ने दमनक को कहा—

एक भव्य मंदिर के निर्माण के समय लकड़ी का काम चल रहा था। तरखान, एक बड़े आरे से एक पेड़ को चीर रहे थे। तरखानों ने दो चिरे भागों के बीच एक मोटी लकड़ी फंसा दी, ताकि चिरे हुए भाग अलग-अलग बने रहें। उन्होंने अपनी आरी निकाल ली और घर चले गये।

उधर, वानरों का एक झुण्ड वहाँ आ पहुँचा। वानरों की सेना

उछल-कूद मचाती रही। एक वानर उस अधचिरे वृक्ष पर आकर बैठ गया और अपनी सहज चंचलतावश दो पाटों के बीच फंसी लकड़ी को खींचकर बाहर निकालने का प्रयास करने लगा। एक अन्य वानर ने उसे समझाया भी, परन्तु उस पर कोई असर नहीं हुआ और वह पहले की तरह लकड़ी को खींचने के लिए जोर लगाता रहा। उसका आधा हिस्सा दोनों पाटों के बीच था। जोर लगाने पर ज्यों ही बीच की लकड़ी बाहर आई, वह चपल वानर पाटों के बीच फंस गया और मृत्यु को प्राप्त हुआ।

इस कहानी को सुनाने के पीछे करकट यही कहना चाहता था कि व्यर्थ के कार्य में प्रवृत्त होने से व्यक्ति की ऐसी ही दुर्दशा होती है। किन्तु ! दमनक नहीं माना और राजा के दुःख को पूछने जाने की जिद करता रहा। करकट ने उसे लाख समझाया परन्तु दमनक ने तर्क से उसकी सभी बातों को काट दिया और अपने स्वामी पिंगलक शेर की ओर चल पड़ा।

दमनक राजा की सेवा में उपस्थित हुआ। आदरपूर्वक प्रणाम किया और कुशल-मंगल पूछने के उपरान्त वह एक ओर चुपचाप बैठ गया।

पिंगलक ने दमनक के प्रति स्नेह दिखाते हुए उसे बहुत दिनों के बाद दिखाई देने का उलाहना दिया। दमनक बोला—हे स्वामी ! जब आपने हमें पद से हटा ही दिया तो निश्चित है कि आप हमारे किसी अपराध के प्रति हमसे क्रुद्ध हैं। इस स्थिति में हम अपना मुख दिखाकर आपके क्रोध को भड़काना नहीं चाहते थे। आप विश्वास करें या न करें किन्तु मैं आपके प्रति समर्पित हूँ।

पिंगलक ने कहा—पिछली बातों को छोड़ो। तुम हमारे मंत्री रहे हो, इसी से मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ। किसी विशेष प्रयोजन से आये हो तो अपनी बात कह सकते हो।

दमनक मुस्कुराया और बोला—महाराज ! मैं एकान्त में आपसे कुछ पूछना चाहता हूँ।

पिंगलक के इशारे से उपस्थित अधिकारीगण बाहर चले गये। तब पिंगलक के कान के पास मुँह ले जाकर धीमे स्वर में दमनक ने पूछा—आप जल पीने नदी तट पर गये और प्यासे ही लौट आए—आखिर क्यूँ ?

पिंगलक ताड़ गया कि दमनक सब जान चुका है। उसे यह भेद मालूम हो चुका है कि मैं एक विचित्र जानवर की हुंकार से डरकर प्यासा ही नदी तट से लौट आया हूँ। उसने बात को टालने की कोशिश भी की, परन्तु दमनक सियार मानने वाला कब था ! किसी न किसी तरकीब से उसने यह भेद उगलवा ही लिया। तब गम्भीरता से उसने कहा—महाराज ! केवल शब्द सुनकर ही आप प्यासे लौट आये ? और अपने पैतृक वन को त्याग देने की सोचने लगे ? क्या आप जैसे शूरवीर और धीर-धनी राजा को यह शोभा देता है ? विपत्तिकाल में ही तो धैर्य की परीक्षा होती है। शब्द मात्र से ही इस प्रकार भयभीत होना तो सर्वथा अनुचित है। पूर्वकाल में एक गीदड़ भी इसी प्रकार अजनबी आवाज को सुनकर डर गया था, परन्तु जब वह साहस जुटाकर सत्य को जानने में प्रवृत्त हुआ तो उसे ज्ञात हुआ कि आवाज करने वाला तो लकड़ी और चमड़ी से बना निर्जीव दमामा था।

पिंगलक ने इस वृतान्त को सुनाने का अनुरोध किया। तब, दमनक ने गोमायु गीदड़ की कहानी राजा को सुनाई।

गोमायु गीदड़

एक समय गोमायु नामक एक भूखा-प्यासा गीदड़ भोजन की तलाश में इधर-उधर भटक रहा था। उसने देखा कि कुछ सैनिक अपने सामान के साथ, भारी-भरकम एक नगाड़े को भी वृक्ष की शाखाओं में छुपा रहे हैं। उसे आश्चर्य हुआ, कि यह भारी चीज क्या है? खैर, सैनिक नगाड़े के साथ सामान को छुपाकर चले गये। गीदड़ देखता रहा।

कुछ देर बाद हवा का एक झोंका आया और पेड़ की शाखाओं के नगाड़े से टकराने पर जोरदार आवाज हुई। गीदड़ डर गया, किन्तु उसे उत्सुकता भी हुई। उसने सोचा—शायद कोई मुसीबत वहाँ है। लेकिन यह है क्या? कैसी आवाज है?

हवा जैसे-जैसे तेज होती, नगाड़ा बजने लगता। गोमायु गीदड़ भय से काँपने लगा। उसे उस जगह पर भयंकर राक्षस की उपस्थिति का आभास होने लगा। अपनी मृत्यु को निकट और निश्चित जानकर गोमायु के हाथ-पाँव फूल गए। पहले तो उसने सोचा कि हिम्मत करके यहाँ से दूर भाग जाऊँ, परन्तु फिर उसके मस्तिष्क में यह विचार कौंधा कि जब मरना ही है तो डरना भी क्या। सत्य का पता तो लगा ही लूँ कि ऐसा मधुर और प्यारा तथा डरावना शब्द किस जीव का है?

इस प्रकार निश्चय करके गोमायु गीदड़ उस शब्द और

आवाज का पीछा करने लगा। नगाड़े के पास पहुँचकर उसने छिपकर देखा। उसने जान लिया कि टहनियों की थाप से आवाज पैदा होती है। और जब हवा रुक जाती है, आवाज भी रुक जाती है।

गोमायु बड़ी सावधानी से इधर-उधर देखकर निश्चिन्त और विश्वास के साथ आगे बढ़ा और स्वयं उसे थापने लगा। फिर, नगाड़े में लगे चमड़े को देख वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसने सोचा—मेरे भोजन की खोज सफल हुई। इसके भीतर रक्त और मांस भी होगा।

उसने आतुरता से नगाड़े को फाड़ डाला। किन्तु उसे निराशा ही हाथ लगी, क्योंकि वहाँ तो लकड़ी के खोल के सिवाय और कुछ था ही नहीं। वह मनोहारी आवाज से भी वंचित हो गया। किन्तु! अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत!

इस कहानी को सुनाकर दमनक ने राजा से कहा—महाराज! इसी से मैं कहता हूँ कि शब्द मात्र को सुनने से ही भयभीत नहीं होना चाहिए। आपके सेवक भी आपका मजाक करेंगे। आप यदि मुझे अनुमति दें तो मैं शब्द करने वाले जीव के सम्बन्ध में सारी जानकारी प्राप्त कर आपको दे सकता हूँ।

पिंगलक बोला—तुम अपना जीवन खतरे में क्यों डालना चाहते हो?

दमनक समझ गया कि शेर डर रहा है, फिर भी मक्खन लगाकर उसने जवाब दिया—स्वामी! पीढ़ियों से हमने आपका नमक खाया है। यदि मेरा शरीर आपके किसी काम आ सके तो मैं इसे अपना सौभाग्य मानूँगा।

पिंगलक सिंह अपने सेवक दमनक की झूठी स्वामीभक्ति पर

मुग्ध हो गया। उसने उसे जाने की अनुमति दे दी। दमनक के चले जाने पर उसे पछतावा होने लगा कि क्यों उसने अपने मन की बात और भय को एक सेवक के सामने कह डाला। यह शायद उचित नहीं था। मैंने इसे अपमानित कर निकाला था, अब यह बदला लेने के लिए कोई चाल भी चल सकता है। इसी सोच-विचार में वह दमनक के लौटने की प्रतीक्षा करने लगा।

उधर दमनक सीधा नदी तट पर गया और उसने दूर से संजीवक को देखा। उसकी दहाड़ को भी सुना। जानकर वह मुस्कुरा उठा। एक शेर जंगल का राजा कहलाने वाला जानवर साधारण बैल की आवाज से भय खा गया? उसे खुशी हुई उसकी मूर्खता पर। उसने निश्चय कर लिया कि कोई गहरी चाल चलकर इन दोनों को लड़वा देगा और अपने अपमान का बदला लेगा।

स्थिति का भली प्रकार विश्लेषण कर दमनक पिंगलक के पास पहुँचा। पिंगलक ने अपने मन के भय और दौर्बल्य को छिपाते हुए और निश्चिन्तता का अभिनय करते हुए दमनक का स्वागत किया। समय उचित समझकर उसने दमनक से उस जीव के सम्बन्ध में पूछा। दमनक बोला—महाराज! उस विचित्र जीव को मैंने न सिर्फ देखा है, अपितु उससे मुलाकात भी की है।

शेर को विश्वास ही नहीं हुआ। आश्चर्य से उसने दमनक से पूछा—क्या तुमने उसके समीप जाकर उसे देखा है?

दमनक ने विश्वासपूर्वक हामी भरी, और यह भी कहा कि यदि आप चाहें तो मैं उसे एक सेवक के रूप में आपकी सेवा में उपस्थित कर सकता हूँ।

पिंगलक मन ही मन बहुत खुश हुआ। दमनक से उसने

कहा—यदि तुम यह काम कर सके तो मैं तुम्हें पुनः मंत्रीपद पर नियुक्त कर दूंगा।

राजा से विचार-विमर्श के बाद वह संजीवक के पास पहुँचा। अधिकार के स्वर में उसे डाँटते हुए उसने कहा—अरे दुष्ट! किसकी अनुमति से तुम शोर मचाकर दूसरे जीवों की शान्ति भंग कर रहे हो? यदि महाराज पिंगलक शेर को पता चल गया तो तुम्हें कच्चा चबा जायेंगे। तुम्हारे लिए अच्छा है कि तुम महाराज पिंगलक के पास जाकर क्षमा-याचना कर लो, अन्यथा तुम्हारी मृत्यु निश्चित ही है?

संजीवक भयभीत हो उठा। विनीत स्वर में उसने दमनक से सहायता की गुहार की, तब अपनी चाल के बतौर वह संजीवक को लेकर राजा के सामने उपस्थित हुआ।

दमनक ने शेर से एकान्त में कहा—राजन! यह कोई सामान्य जीव न होकर भगवान शंकर का वाहन महावृषभ नन्दी है। इसका कहना है कि इसे भगवान शंकर ने यहाँ की कोमल घास चरने की अनुमति दी है, और भगवान शंकर ने ही इसे इस वन का अधिकार भी प्रदान किया है।

पिंगलक ने कांपते स्वर में दमनक से कहा—सचमुच ही यह देव जीव है। तभी तो इस प्रकार निर्भय होकर गरजता घूमता है। इसका कोई उपाय सोचो!

दमनक तो अपनी चाल को अंजाम दे रहा था। शेर के भय को वह ताड़ गया था। राजा से उसने कहा—महाराज! मैंने उसे कहा है कि हमारे राजा पिंगलक देवी चण्डिका के वाहन हैं और स्वयं माँ भगवती ने उन्हें इस वन का राज्य सौंपा है। यदि आप देवी के वरदान को आदर देते हुए अतिथि रूप में रहना चाहते हैं तो आपका स्वागत है, और उसने मेरे इस सुझाव को सहर्ष मान भी लिया है।

राजा ने दमनक के बुद्धिबल की प्रशंसा की और तत्काल बाहर आकर संजीवक से मिला। दोनों में मित्रता हुई और समय बीतने लगा।

दमनक ने संजीवक को दन्तिल सेठ और गोरम्भ की कहानी सुनाकर यह भी कहा कि राजा का विश्वास प्राप्त कर मदोन्मत्त होकर हमें भूल मत जाना। राजकर्मचारियों की उपेक्षा करने वाला अधिकारी दन्तिल सेठ की तरह सम्मान-प्रतिष्ठा को खोकर सबकी दृष्टि में पतित हो जाता है। इस बात को सुनकर संजीवक ने दमनक से उत्सुकतापूर्वक पूछा कि भाई दमनक तुम तो मेरे मित्र और हितैषी हो। मेरे प्राणरक्षक भी हो। तुम ऐसी बात क्यों कह रहे हो।

तब दमनक ने कहा कि मैं आपका मित्र और शुभाकांक्षी होने पर भी राजकर्मचारी हूँ। इसीलिए मैंने दन्तिल और गोरम्भ की बात कही है।

संजीवक ने दमनक से इस वार्ता को सुनाने का आग्रह किया। तब दमनक ने संजीवक इस तरह यह वार्ता सुनाई।

दन्तिल सेठ और गोरम्भ

वर्धमान नगर में आभूषणों का व्यापारी दन्तिल सेठ रहता था। उसने अपने लोकहित के कार्यों से प्रजा का मन जीत लिया था और उसकी ख्याति राजा तक पहुँच गई थी। राजा ने उसके व्यवहार से प्रसन्न होकर राजमहल में आने-जाने की खुली छूट दे रखी थी। उसे रनिवास में भी आने-जाने की छूट थी। इस प्रकार उसका सम्मान और बढ़ गया था। अपनी बेटी के विवाह में उसने नगर के प्रतिष्ठित लोगों, राजपरिवार के सदस्यों और राजकर्मचारियों को बुलावा भेजा। विवाह में सभी सम्मिलित हुए और सेठ ने उनके खाने-पीने की उचित व्यवस्था के अलावा लौटते समय बहुमूल्य उपहार भी भेंट किए।

गोरम्भ नाम का एक नौकर भी विवाह में सम्मिलित हुआ था। वह रनिवास में रानियों के बिस्तर लगाने और झाड़-पोंछ करने का कार्य करता था। सेठ ने उसकी बात पर गौर नहीं किया। इससे प्रोत्साहित होकर सेठ के यहाँ विवाह में किसी ने उसकी बात न पूछी। उसने चिढ़ में दन्तिल से उसके सेवकों के दुर्व्यवहार की शिकायत की तो सेठ के कर्मचारियों ने धक्का देकर उसे बाहर निकाल दिया। गोरम्भ दुखी मन घर लौट आया। सेठ से अपने अपमान का बदला लेने का उपाय वह सोचता रहा। इसके लिए वह समय की प्रतीक्षा करने लगा।

एक दिन प्रातःकाल गोरम्भ ने राजा को अर्धनिद्रा की अवस्था

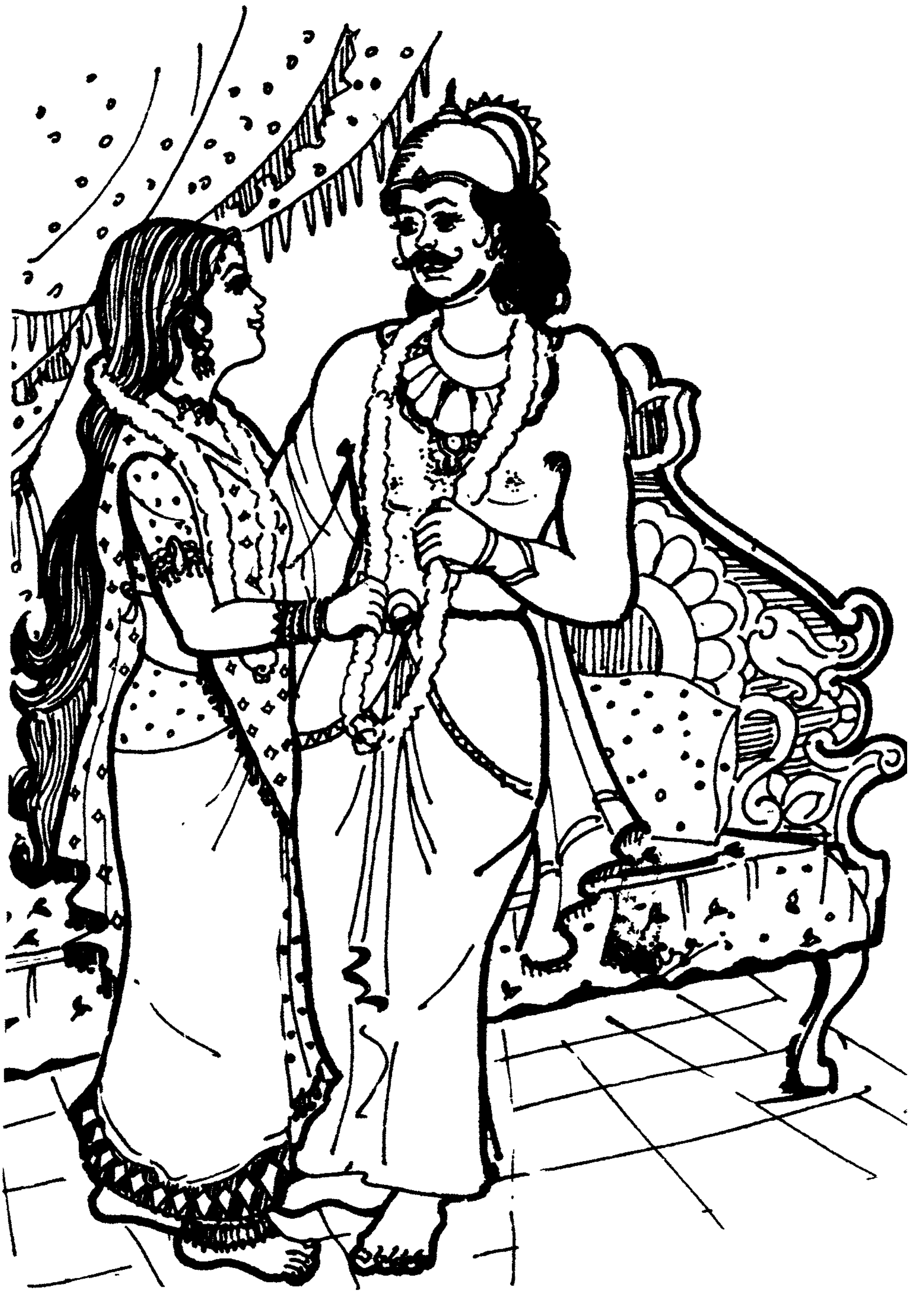
में देखा तो बड़बड़ाते हुए बोला—दन्तिल सेठ का यह दुस्साहस कि रानी का आलिंगन करे ! राम-राम ! क्या समय आ गया है? जिस थाली में खाना, उसी में छेद करना ! राजा चौंका, सचेत हो उसने गोरम्भ से पूछा—क्या सचमुच दन्तिल सेठ रानी का आलिंगन करता है? गोरम्भ ने भयभीत होने का अभिनय किया और कहा—महाराज ! क्या मैंने ऐसा कुछ कहा है? नहीं-नहीं ! ऐसा नहीं है। मन ही मन राजा ने विचार किया—शायद गोरम्भ के मुख से सत्य निकल गया है, परन्तु अब डर के कारण यह बात छिपाना चाहता है, दाल में कुछ काला अवश्य है। स्त्री का भरोसा ही क्या?

आखिर राजा के मन में रानी और सेठ के प्रति सन्देह घर कर ही गया। सर्वप्रथम उसने रनिवास में सेठ के प्रवेश को बंद कर दिया। सेठ को मालूम हुआ तो आश्चर्य हुआ। राजा के व्यवहार में आये परिवर्तन को भी वह समझ रहा था। इस परिवर्तन के कारण को ढूंढ़ने की सेठ ने बहुत कोशिश की परन्तु उसे कुछ समझ आया ही नहीं। इधर गोरम्भ सेठ को चिढ़ाने की तमन्ना में उसके सामने से गुजरा तो सेठ को उसके अपमान की बात ध्यान आ गई। सेठ ने उसे बहलाया और घर ले आया। अपने नौकरों के व्यवहार के लिए खेद प्रकट किया और उसे वस्त्र-आभूषण आदि उपहार देकर सम्मान सहित विदा किया। उसने प्रसन्न होकर सेठ को उसका गौरव वापस दिलाने का आश्वासन दिया और खुशी-खुशी घर लौट आया।

अगले दिन प्रातः जब राजा अर्धनिद्रित अवस्था में था तो गोरम्भ बड़बड़ाते हुए बोला—हमारे राजा को देखो, मलत्याग के समय ककड़ी खाते हैं।

राजा ने तत्काल उसे डांटते हुए कहा—यह क्या बकता है।

गोरम्भ ने भोलेपन से उत्तर दिया—महाराज ! क्या मैंने कुछ कहा है?



राजा विस्मय से भर उठा, उसने सोचा—मैंने अपने जीवन में मलत्याग करते समय कभी कुछ नहीं खाया और यह नाहक मनगढ़न्त बकवास कर रहा है। लगता है कि रानी और सेठ के आलिंगन की इसकी बकवास भी झूठी है। इस विचार से उसने सेठ और रानी को निर्दोष समझा और पुनः सेठ रनिवास-प्रवेश पर लगी पाबन्दी को हटा लिया। सेठ प्रसन्न हुआ और राजा सन्देह से मुक्त।

कथा सुनकर संजीवक ने दमनक से कभी उसकी उपेक्षा न करने का वचन दिया।

पिंगलक ने भी यमुना पर जाकर अपनी प्यास बुझाई तथा जी भरकर जल-विहार किया। राजा ने दमनक और करकट को राज्य का भार सौंप दिया, किन्तु संजीवक के सान्निध्य में उसने मांस खाना छोड़ दिया। हिंसा को त्याग दिया। संजीवक के साथ वह शाकांहार से ही अपना पेट भरने लगा।

पिंगलक के शाकाहारी हो जाने का दुष्परिणाम यह हुआ कि उसके अनुयायियों को मांस मिलना बंद हो गया। शेर द्वारा शिकार करने और उसके खाने से बचे-खुचे मांस पर जीने वाले जीव जीभ लपलपाने लगे। दमनक और करकट भी आधे पेट सोने लगे।

एक रोज दमनक ने करकट से कहा—स्वामी पिंगलक दुष्ट संजीवक की मुट्ठी में है। हमने घासखोर और मांसखोर की मित्रता कराकर गलत किया है। विजय घासखोर की हुई है। जिस प्रकार अपनी मूर्खता के कारण शृगाल दो मेषों के युद्ध में मारा गया, देव शर्मा आषाढ़भूति के हाथों अपना धन गँवा बैठाा और दूती जुलाहे के हाथों अपनी नाक कटवा बैठी, उसी प्रकार हमने भी अपने पैरों पर आप ही कुल्हाड़ी मारी है।

करकट की उत्सुकता पर दमनक ने ऐसी ही एक कथा को सुनाना शुरू किया।

देव शर्मा और दूती का वृतान्त

एक नगर के बाहर संन्यासियों का एक मठ था। उसमें देव शर्मा नामक संन्यासी रहता था। यह संन्यासी अपने वाक्-चातुर्य से महाजनों को ऊल्लू बनाकर धन ऐंठता था। संन्यासी कंजूस इतना था कि कौड़ी भी खर्च न करता। अपनी जमा-पूँजी को एक पोटली में बाँधकर वह उसे अपनी छाती से लगाए रहता था।

आषाढ़भूति नामक एक धूर्त को इसकी जानकारी मिल गई। उसने इस धन को हथियाने का पक्का इरादा बना लिया। सीनाजोरी की बजाय चालाकी से उसने धन प्राप्त करना चाहा। देव शर्मा के समीप पहुँचने के लिए उसने एक चाल चली। सोचा कि साधू का शिष्यत्व ग्रहण करना चाहिए, और वह उसका विश्वास जीनते लगा।

धीरे-धीरे आषाढ़भूति ने देव शर्मा का विश्वास जीत लिया और उन्हें गुरु मानकर दीक्षा देने की प्रार्थना करने लगा। आषाढ़भूति द्वारा बार-बार प्रार्थना करने पर देव शर्मा ने उसे विधिवत् दीक्षा देकर अपना शिष्य बना लिया। अब वह आचार्य से शिक्षा गृहण करने लगा।

समय बीतने लगा परन्तु वह देव शर्मा का पूर्ण विश्वास नहीं जीत सका। अपना उद्देश्य सिद्ध होता न देखकर उसने देव शर्मा का वध करने की ठान ली। वह योजना बना ही रहा था कि देव शर्मा

के एक शिष्य का पुत्र गुरु को निमन्त्रण देने आ पहुँचा। निमन्त्रण स्वीकार कर लिया गया। अगले दिन शिष्य का वह पुत्र गुरु को लेकर निकल पड़ा। मार्ग में एक नदी पड़ती थी, जिसे तैरकर पार करना पड़ता था। देव शर्मा ने कमर से बाँधी पोटली हाथ में ली और उसे गुदड़ी में छिपा लिया। आषाढ़भूति की दृष्टि से यह छिप न सका।

देव शर्मा का दुर्भाग्य था कि उसी समय उसे शौच निवृत्ति के लिए जाना पड़ा। आतुरता में उसने गुदड़ी को धरती पर रखा और आषाढ़भूति को रखवाली का निर्देश देकर चला गया। आषाढ़भूति तो इसी अवसर की ताक में था। ज्यों ही धोती को सँभाल वह आँखों से ओझल हुआ, आषाढ़भूति ने गुदड़ी से पोटली निकाली और चम्पत हो गया।

इधर शौच करते देव शर्मा ने दो मेषों को आपस में लड़ते देखा। दोनों मेष आपस में सींग मारते तो खून का फव्वारा फूट निकलता। एक गीदड़ बीच में घुसकर खून को चाटने लगता। देव शर्मा ने सोचा कि गीदड़ भी कितना मूर्ख है कि रक्त की दो बूंदों के लिए प्राणों को संकट में डाल रहा है। और हुआ भी यही, दोनों मेषों की टक्कर के बीच गीदड़ फंस गया और मृत्यु को प्राप्त हुआ।

इसी विचार को मन में लिए जब वह निवृत्त होकर लौटा तो देखा कि न तो पोटली वहाँ थी और न ही आंषाढ़भूति। वह पछाड़ खाकर धरती पर गिर पड़ा। कुछ देर बाद सचेत होने पर वह बुझे मन समीप के गाँव की ओर चल दिया।

रास्ते में देव शर्मा को एक जुलाहा दम्पति मिला। उसने उनसे आज रात्रि में आश्रय देने की प्रार्थना की। जुलाहे ने अपनी पत्नी को निर्देश दिया कि संन्यासी को घर ले जाए और उसके भोजन

आदि की यथायोग्य व्यवस्था करे। स्त्री धूर्त और व्यभिचारिणी थी, पति के साथ जाने पर उसे अपने यार से मिलने की सम्भावना थी।

पति का आदेश था तो अरुचिकर, परन्तु वह आज्ञापालन से इन्कार नहीं कर सकती थी।

संन्यासी देव शर्मा को वह घर ले आई। पति घर पर था नहीं, और यार से मिलने की तीव्र आकांक्षा मन में थी, सो—देव शर्मा को एक खाट पर बैठा सातों शृंगार कर वह घर से निकलने लगी। दरवाजे पर पहुँची तो देखा, सामने से जुलाहा लौट रहा है। जुलाहे ने भी उसे देख लिया था। क्रुद्ध.मुद्रा में पत्नी से उसने कहा—अरी दुष्ट! मेरी अनुपस्थिति में यह शृंगार किसके लिए? शायद अपने यार से मिलने जा रही थी?

दुष्टा काँपने लगी। उसके पति ने उसे खम्बे के साथ रस्सी से बाँध दिया।

उधर जुलाहिन के यार को प्रतीक्षा करते हुए जब बहुत देर हो गई और वह अपनी कामुकता पर संयम नहीं रख सका तो उसने एक दूती को उसे बुलाने भेजा। दूती आई और उसके यार की कामविह्वलता का वर्णन उससे किया। जुलाहिन तड़फ उठी। तरकीब निकाली गई और हुआ यूँ कि जुलाहिन की जगह दूती ने ले ली और जुलाहिन अपने यार से मिलने चल पड़ी।

खुसर-फुसर का यह शोर जब हुआ तो जुलाहे की नींद उचट गई, लेकिन जब तक जुलाहिन अपने यार से मिलने जा चुकी थी। अर्द्धनिद्रा में जुलाहा उठा और रस्सी से बँधी दूती को अपनी पत्नी मान बोला—'चाण्डाली! किससे बात कर रही थी?'

दूती चुप रही। इस चुप्पी ने जुलाहे के सन्देह को पुष्ट कर दिया। वह क्रोध में भीतर गया और छुरी लेकर, दूती को अपनी स्त्री समझ उसकी नाक काट ली। दूती ने फिर भी जुबान नहीं खोली।

अपने यार के साथ सम्भोग से निवृत्त हो जुलाहिन लौट आई। उसने दूती को खोल दिया और स्वयं रस्सी से बँध गई।

सवेरे जुलाहा बोला—'परपुरुषगामिनी दुष्टे ! अब भी यार का नाम बता दे, अभी तो तेरी नाक ही काटी है नहीं तेरे कान भी काट दूँगा।'

जुलाहिन समझ गई कि उसके पति ने दूती की नाक काट ली है। तुरन्त उसने तेवर बदला और कहा—हे देवी-देवताओ ! हे लोकपालो ! अगर मैं पतिव्रता हूँ तो मेरी नाक अक्षत (बिना कटी) हो जाये और यदि मैंने कभी किसी परपुरुष का मन में ध्यान भी किया हो तो मैं इसी समय जलकर राख बन जाऊँ।'

जुलाहे ने पहले तो यह सब उसका ढोंग समझा, परन्तु दिन निकलने पर जब उसने पत्नी के चेहरे की तरफ देखा और नाक को ठीक-ठाक पाया तो विस्मय से भर उठा। उसने उसी समय पत्नी के बन्धन खोल दिये और क्षमा याचना करने लगा।

देव शर्मा ने इस लीला को अपनी आँखों से देखा था। सो, वह आश्चर्यचकित हो सोचने लगा—विधाता ने गुन्जाफल के समान बाहर से आकर्षक इस नारी की रचना किस प्रकार की है। औरत जब अपनी करनी पर उतर आती है तो संभव और असंभव को संभव कर डालती है।' उसने सोचा कि दूती की दशा को भी देखा जाए। इसी विचार से प्रातः भ्रमण के बहाने वह दूती के घर की ओर चल दिया।

देव शर्मा ने देखा कि नाई का धंधा करने वाला दूती का पति उससे कैंची माँगता है तो वह कंघा दे देती है, बाल काटने की मशीन माँगता है तो वह उस्तरा फेंक देती है। मुँह उसने ढाँप रखा है। पत्नी के इस अजीब ढंग पर उसे क्रोध आया और उसने उस्तरा फेंककर मारा। बस, फिर क्या था, धूर्त नाइन को बहाना मिल गया।

वह जोर से चिल्ला उठी और बकने लगी—'हाय मेरी नाक कट गई, मेरे पति ने यह क्या अनर्थ कर डाला।' बार-बार उसी वाक्य को दोहराती वह घर से बाहर निकल गई।

लोग इकट्ठे हो गये और किसी ने सिपाहियों को सूचना दे दी। सिपाहियों ने अपनी पत्नी की नाक काट लेने के आरोप में नाई को गिरफ्तार कर लिया। थाने में उसकी ऐसी धुनाई हुई कि उस बेचारे की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई और वह अपने बचाव में कुछ बोल भी नहीं पाया।

निरपराध नाई की दुर्दशा पर द्रवित हो देव शर्मा दण्डाधिकारी के पास पहुँचा और सारी घटना का आँखों देखा हाल कह सुनाया।

जाँच करने पर घटना सत्य पाई गई। फलतः नाई को मुक्त कर दिया गया और नाइन को पति पर झूठा अभियोग लगाने के अपराध में दण्डित किया गया। उसके दोनों कान काट डाले गये।

देव शर्मा ने गहरी निःश्वास छोड़ी और अपने रास्ते चल पड़ा। उसे अपनी धन हानि का ध्यान ही न रहा।

करकट को ये सभी आख्यान विस्तारपूर्वक सुनाकर दमनक बोला—पिंगलक और संजीवक के बीच यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई कि दोनों की दोस्ती में हमें नकार दिया गया तो मैं ऐसी चाल चलूँगा कि दोनों में फूट पड़ जायेगी और दोनों एक-दूसरे के खून के प्यासे हो जायेंगे।

—'परन्तु तुम ये कैसे करोगे?' करकट बोला।

—'जैसे ढोंगी कौलिक ने किया था?' दमनक ने कहा।

—'तो ढोंगी कौलिक की कथा भी सुनाओ।' करकट ने जिज्ञासा की।

तब दमनक ने इस प्रकार इस आख्यान को सुनाया—

ढोंगी कौलिक

किसी नगर में एक ढोंगी कौलिक रहता था। एक रथकार उसका परम मित्र था। एक बार दोनों मित्र मेले में गए, वहाँ उन्होंने हाथी पर सवार अत्यन्त रूपवती राजकुमारी को देखा। कौलिक उसे देखते ही उस पर मुग्ध हो गया। वह उसे पाने को बेचैन हो उठा।

उसके मित्र रथकार ने उसे समझाना चाहा किन्तु उस पर उसका कोई असर नहीं हुआ।

रथकार से उसने कहा—'मित्र! मुझे चाहे जेल हो जाए या चाबुकों की मार खानी पड़े परन्तु राजक़ुमारी को पाये बिना मैं रह नहीं सकता हूँ।'

रथकार ने मित्र की विह्वलता को देखा तो बोला—'यदि तुम आग से खेलना ही चाहते हो तो सुनो। मैं तुम्हारे लिए एक ऐसा रथ बनाऊँगा कि उसमें लगे यंत्र की सहायता से उड़कर तुम राजकुमारी के निजी कक्ष तक पहुँच जाओगे।'

कौलिक यह सुनकर बहुत खुश हुआ और मित्र से जल्दी से जल्दी रथ बनाने की गुहार करने लगा।

रथकार ने रथ तैयार कर कौलिक को उसे उड़ाने और उतारने की विधि समझा दी।

धूर्त कौलिक के दिमाग में आया कि क्यों न चतुर्भुज विष्णु बनकर राजकुमारी के पास पहुँचा जाए। राजकुमारी विष्णु-दर्शन

और उसके साथ अपने सम्बन्ध को अपना सौभाग्य समझेगी। वह शीघ्र ही सम्भोग के लिए तैयार हो जायेगी। बस, इससे मुझे अभीष्ट मिल सकेगा।

इस विचार को पूर्ण रूप देने के लिए उसने रथकार को राजी कर लिया। रथकार ने मित्र के अनुरोध को गौरव देते हुए उसे लकड़ी की दो भुजाएं इस ढंग से लगा दीं कि वह सचमुच ही विष्णुनारायण लगने लगा। कामासक्त दुष्ट कौलिक उसी प्रकार से आश्वस्त होकर विष्णु जी के रूप में गरुड़ रूपी यान में सवार होकर उड़ चला और राजमहल की उस छत पर जहाँ राजकुमारी निवास करती थी, विमान को जा उतारा। राजकुमारी साक्षात भगवान विष्णु को सामने देख आश्चर्य से भर उठी।

कौलिक ने हक्की-बक्की राजकुमारी के बालों को छूकर कहा—राजपुत्री ! मैं श्रीलक्ष्मी जी को छोड़ स्वयं तुम्हारे पास रतिभोग के लिए आया हूँ। आज जब मैंने मृत्युलोक पर नजर डाली और तुम्हारे रूप-सौन्दर्य को देखा तो रतिभोग के लिए गरुड़ को यहाँ आने का आदेश दिया।

राजकुमारी बोली—हे देव ! अशुद्ध एवं अज्ञानी जीव के साथ आपका सम्बन्ध कैसे उपयुक्त है ?

धूर्त कौलिक ने कहा—तुम सत्य कहती हो क्योंकि इस समय तुम्हारे मन पर मेरी माया का साया पड़ा है परन्तु तुम्हें मालूम नहीं कि तुम राधा गोपी की अवतार हो और शापवश यहाँ जी रही हो। तुम्हारा और हमारा सम्बन्ध तो नित्य और शाश्वत है।

राजकुमारी बोली—प्रभो ! यदि यह सब सत्य है तो आप मेरे पिता से मुझे माँग लीजिए और फिर स्वेच्छा से मेरा उपभोग कीजिए। मेरे माता-पिता ही नहीं हमारा सारा नगर इस संबंध से कृतकृत्य हो जाएगा। आपकी इस अनुकम्पा को प्राप्त कर सभी

अपने को धन्य मानेंगे। इसमें धर्म और लोक-मर्यादा की रक्षा होगी।

धूर्त ने उत्तर दिया—तुम मूलरूप में गोपिका हो, इसीलिए मेरा दर्शन पा रही हो, मनुष्य सहज मेरा दर्शन नहीं पा सकता। फिर, तुम्हारे पिता के समक्ष मैं कैसे जा सकता हूँ। तुम इस विवाद को छोड़ गन्धर्व विवाह पद्धति द्वारा स्वयं को मेरे अर्पण कर दो। समय, स्वयं ही तुम्हारे पिता से बात करेगा।

राजकुमारी ऐसी सकपकाई कि इनकार न कर सकी और उस धूर्त कौलिक ने उस रात उसके साथ जमकर रतिभोग किया। दोनों ऐसे आनन्द में डूबे कि विभोर हो उठे। इस प्रकार प्रति रात्रि यह क्रम चलने लगा।

दिन बीते तो राजकुमारी के भवन में पुरुष प्रवेश की भनक पहरेदारों को लग गई।

बात राजा-रानी तक पहुँची।

रानी ने पुत्री को बुलवाया और सत्य जानना चाहा। भोलेपन में राजकुमारी ने भगवान विष्णु की उपस्थिति और गन्धर्व विवाह की कथा कह सुनाई।

सुनकर रानी को सन्देह हुआ और वह सत्य पहचानने के लिए राजा के साथ छुपकर बैठ गई।

रात्रि होने पर उन्होंने कौलिक को विष्णुनारायण के रूप में देखा तो विस्मय-विमुग्ध हो गए। पति-पत्नी ने अपनी पुत्री के लिए ऐसा वर पाया तो स्वयं को धन्य समझने लगे और अपने भाग्य की सराहना करने लगे कि स्वयं श्रीराधा ने उनके घर जन्म लिया।

उन्होंने अपनी पुत्री को सहवास की सहज अनुमति दे दी।

धूर्त कौलिक का क्रम अनवरत चलता रहा और समय बीतता रहा।

कुछ दिनों बाद पड़ोसी राजा ने उस राज्य पर चढ़ाई कर दी। पड़ोसी राजा की सेना के सामने उसकी सेना नष्ट होने लगी। मंत्रियों की सलाह पर राजा ने अपनी पुत्री से कहा कि वह भगवान् विष्णु से हमारे लिए प्रार्थना करे। यदि किसी दैवीय शक्ति की सहायता समय पर नहीं मिली तो निश्चय ही कल दुर्ग पर दुश्मन का अधिकार हो जायेगा।

रात्रि में कौलिक के आने पर राजकुमारी ने अपनी व्यथा-कथा सुनाई।

कौलिक ने सोचा कि यदि दुर्ग छिन जाता है तो राजकुमारी भी छिन जायेगी। अतः क्यों न मैं अपने को आकाश में इस प्रकार प्रकाशित करूँ कि शत्रु सेना भयभीत हो जाये और राजा की सेना में उत्साह का संचार हो जाये तथा विजय की ओर अग्रसर हो सके। यदि इस दुस्साहस में मेरी मृत्यु भी हो गई तो यह अपनी प्रेमिका के प्रति मेरे कर्तव्य का पालन ही होगा।

इधर त्रिकालदर्शी श्रीविष्णुजी ने सोचा कि यदि कौलिक मरता है, अथवा हारता है तो कलंक मुझे ही लगेगा। अतः गरुड़ को बुलाकर उन्होंने आदेश दिया कि तुम नकली यान 'गरुड़' में प्रवेश करो, और स्वयं श्रीविष्णु कौलिक के शरीर में प्रवेश कर गये। तब तो कौलिक को विजय मिलना निश्चित था ही।

चारों तरफ समाचार फैल गया कि भगवान् विष्णु ने राजा की सहायता की है।

राजा की पराजय विजय में बदल गई तो वह फूला न समाया। वह कौलिक की पूजा-अर्चना करने लगा और उसे साक्षात नारायण समझता हुआ उसके प्रति कृतज्ञता से भर गया।

किन्तु! कौलिक अपराधबोध से ग्रस्त होकर आत्मग्लानि से गड़ा जा रहा था।

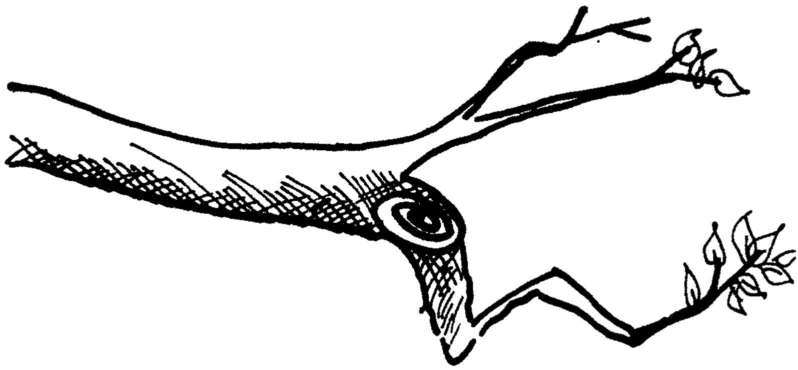
उसने राजा को अपना भेद खोल दिया और सारा वृतान्त सुना डाला तथा युद्ध में विजय को देवीय चमत्कार बताते हुए अपनी दुष्टता के लिए क्षमा प्रार्थना करने लगा।

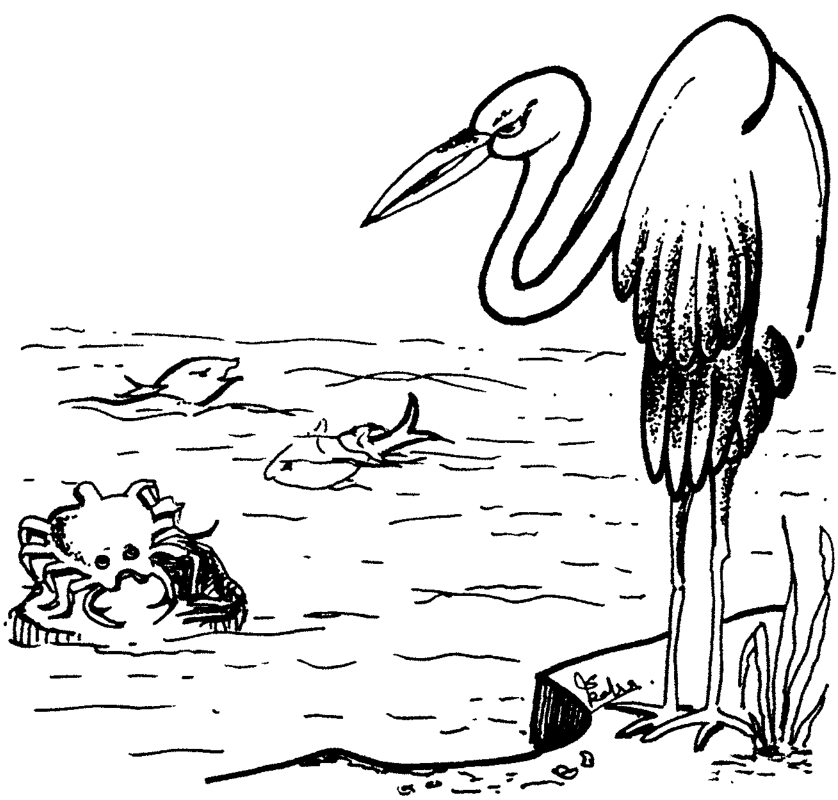
राजा तो विजय से खुश था, उसने कौलिक के बुद्धिकौशल की सराहना की और राजकुमारी का विवाह उसी से कर दिया। राजा का दामाद बनकर राजकुमारी के महलों में वह सुखों का उपभोग करने लगा।

कथा सुनाकर दमनक ने कहा—अगर सुनियोजित ढंग से षड्यंत्र रचा जाये तो वह गुप्त भी रखा जा सकता है और उसमें सफलता भी सुनिश्चित है। यहाँ तक कि स्वयं भगवान भी उस योजना की सिद्धि में सहायक बनते हैं।

करकट बोला—मित्र! निःसन्देह तुम बुद्धिमान हो और योजनानुसार कार्य करने में निपुण हो, परन्तु संजीवक भी मूर्ख नहीं। वह नीति कुशल और बुद्धिमान है। संजीवक की बुद्धि और पिंगलक की शक्ति का संयोग हो गया है। अब हमारे लिए कुछ कर गुजरना सरल कार्य नहीं। संजीवक और पिंगलक में फूट डालना आसान काम नहीं।

दमनक हँसा और कहने लगा—निःसन्देह तुमने स्थिति का सही विश्लेषण किया है। परन्तु तुम यह क्यों भूलते हो कि जो कार्य पराक्रम से नहीं किया जा सकता, उसे राजनीति और बुद्धि से उपाय किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में मैं तुम्हें कव्वी द्वारा सर्प के विनाश की कथा सुनाता हूँ—ध्यान देकर सुनना।





शृगाल गीदड़ और सर्प

जंगल में एक भारी वटवृक्ष पर कव्वे-कव्वी रहते थे। संयोग से उसी वृक्ष की जड़ में अजगर भी निवास करता था। कव्वी जब भी अण्डे देती, अजगर उन्हें खा जाता। बेचारे कव्वा-कव्वी रो-बिलखकर मन मार लेते। अबकी बार जब कव्वी के प्रसव का समय समीप आया तो उसे भावी संकट कचोटने लगा। कव्वी ने अपने पति कव्वे से इसका कोई उपाय करने को कहा तो वह अपने मित्र शृगाल से सलाह करने चल दिया।

शृगाल गीदड़ ने अपने मित्र का दुःख सुना तो बोला—चिन्ता की कोई बात नहीं, नीच सर्प को उपाय से मारा जा सकता है। उपाय जानने वाला छोटा आदमी भी बड़े से बड़े शूरवीर को धराशायी कर सकता है। इसके लिए शृगाल गीदड़ ने कव्वे को एक कहानी सुनाई। वह बोला—

एक वन में एक सुन्दर तालाब था। उस तालाब पर रहने वाला एक बगुला वृद्ध और अशक्त हो चुका था। अब मछलियों को पकड़ना उसके लिए सम्भव न था। भूख से व्याकुल उस बगुले के दिमाग में एक युक्ति आई और वह अपनी योजना के अनुसार एक दिन तालाब के किनारे बैठकर आँसू बहाने लगा। जलचर जीव कुछ देर तक बगुले के रुदन को तमाशा समझकर देखते रहे, परन्तु जब उन्होंने देखा कि बगुले का रोना थमता ही,नहीं तो उन सबों के



मन में कारण जानने की उत्सुकता हुई। आखिर, एक केकड़े को आगे कर कुछ जलचर जीव बगुले के पास आये और सहानुभूति जताकर उससे रोने का कारण पूछने लगे।

ढोंगी बगुला नाटक करते हुए बताने लगा—बन्धुओ ! मैं बड़ा पापी हूँ। मैंने अपना पेट भरने के लिए बहुत-सी मछलियों के प्राण लिए हैं। मैंने यह नहीं सोचा कि एक दिन मुझे भी मरना है। फिर दूसरों के प्राण लेने का क्या लाभ ! मैंने अपने पापों का प्रायश्चित करने के लिए भूखे रहकर प्राण छोड़ देने का निश्चय कर लिया है। परन्तु एक चिन्ता मुझे परेशान कर रही है और वह मेरी आत्महत्या में बाधक बन रही है।

जलचर जीवों ने उस चिंता के बारे में जानना चाहा तो बगुला कहने लगा—बन्धुओ ! मैं भी आप सबों की तरह इस तालाब में जन्मा, पला और बड़ा हुआ हूँ। मैंने सुना है कि इधर बारह साल तक निरन्तर रहने वाला अनावृष्टि का योग इस बार इस सरोवर क्षेत्र में पड़ने वाला है। यदि निरन्तर बारह वर्षों तक वर्षा न हुई तो आप सबको तड़फ-तड़फकर प्राण छोड़ने होंगे। यह विचार आते ही मैं काँप उठता हूँ और सोचता हूँ कि यदि कहीं मैं किसी रूप में इस विपत्ति से आपकी रक्षा कर सकूँ तो मेरे पिछले पापों का प्रायश्चित हो जायेगा।

जलचर जीवों ने चिन्तातुर होकर पूछा—मामा ! अनावृष्टि की बात को आपने किससे सुना है और हमारे बचाव का कौन-सा उपाय आपने सोचा है ?

धूर्त बगुला मन ही मन प्रसन्न हुआ और बोला—मुझे यह सब मौसम विशेषज्ञों ने बतलाया है। अफसोस है कि आप सबों को इसकी भनक तक नहीं। मुझे चिन्ता है कि आप सबों का कहीं बीज ही नष्ट न हो जाये ?

धूर्त बगुले की गम्भीरता को देख सभी को विश्वास होने लगा और वे सभी इस विपत्ति से छुटकारे का उपाय पूछने लगे।

दुष्ट बगुले ने गम्भीर मुद्रा में उत्तर दिया—यहाँ से थोड़ी दूर साफ जल से भरा एक लम्बा-चौड़ा जलाशय है। अगर चौबीस वर्षों तक भी वर्षा न हो तो भी वह सरोवर सूख नहीं सकता। अभी तक वहाँ दूसरे जीवों का प्रवेश नहीं हुआ है। अगर तुम सभी को मुझ पर विश्वास हो तो मैं तुम्हें वहाँ पहुँचा सकता हूँ।

जलचरों ने बगुले पर विश्वास कर लिया और वह हर रोज दूसरे तालाब पर ले जाने के बहाने मछलियों को अपनी पीठ पर बिठाकर ले जाता। जलाशय से थोड़ी दूर बड़ी चट्टान पर उन्हें पटक देता और फिर जी भरकर भोजन करता। इस प्रकार वह बड़े मजे से प्रतिदिन अपना पेट भरता रहा।

एक दिन केकड़े ने बगुले से कहा—मामा! क्या मेरी बारी कभी नहीं आयेगी? मुझे भी यहाँ से ले चलो।

बगुले ने अपनी जीभ का स्वाद बदलने के लिए केकड़े को ले जाना ठीक समझा और वह उसे ले जाने के लिए तैयार हो गया।

केकड़े को अपनी पीठ पर बिठाकर बगुला चल पड़ा। चट्टान के समीप मछलियों की हड्डियों के ढेर को जब केकड़े ने देखा तो वह बगुले की चालाकी समझ गया। फिर भी उसने शांत रहकर बगुले से पूछा—दूसरा जलाशय किधर है?

बगुला बोला—मैं अभी तुझे स्वर्ग भेजता हूँ, वहाँ मछलियों से जाकर पूछ लेना।

अभी बगुला यह कह ही रहा था कि केकड़े ने उसकी गर्दन को इस प्रकार जोर से दबाया कि उसके प्राण पखेरू उड़ गये। उसने वापस सरोवर पर लौट सभी जलचरों को बगुले की धूर्तता से अवगत कराया तो सभी अपने भाग्य को सराहने लगे। उन्होंने केकड़े की बुद्धिमता की प्रशंसा की तथा उत्साहपूर्वक उसका अभिनन्दन किया।

गीदड़ ने कव्वे से कहा—अनेक मछलियों को खाने वाला



बगुला एक समझदार केकड़े द्वारा मार डाला गया। यदि हम भी कोई उपाय खोज लें तो सर्प का अंत निश्चित है। मेरा कहा मानो तो एक तरकीब समझ आती है। कव्वे को भला आपत्ति क्या थी। उसने तुरन्त उस तरकीब के विषय में पूछा। गीदड़ कहने लगा—तुम राजा अथवा राजकुमारी के गले की माला किसी प्रकार उठा लाओ, और उसे दुष्ट सर्प के बिल के पास रख दो, फिर मेरा कमाल देखना।

कव्वा राजा के महलों की तरफ उड़ चला। रास्ते में उसने देखा कि राजकुमारी सरोवर में स्नान कर रही है। कपड़े और आभूषणों के पास पहरेदार पहरा दे रहे हैं। फिर भी, मौका देखकर कव्वे ने माला उठा ली और उसे लाकर सर्प के बिल के पास फैंक दिया।

राजपुरुष कव्वे का पीछा करते हुए सर्प के बिल तक पहुँच गए। वहाँ उन्होंने देखा कि एक भयानक सर्प राजकुमार की माला के पास फन फैलाये बैठा है। राजपुरुषों ने तत्काल शस्त्रों से सर्प पर प्रहार कर दिया और उसे थोड़ी ही देर में खत्म कर दिया।

सर्प के मारे जाने के बाद कव्वा और कव्वी निश्चिन्त होकर उस वृक्ष पर सुखपूर्वक निवास करने लगे। उसके परिवार में निर्बाध वृद्धि होने लगी। अब कव्वी के अण्डों को कोई खतरा नहीं था।

कथा सुनकर करकट से दमनक ने कहा—मित्र! इसीलिए मैं कहता हूँ कि जिस उपाय को बुद्धि द्वारा किया जा सकता है, वह पराक्रम के द्वारा सम्भव नहीं। वस्तुतः ऐसा कोई भी कार्य नहीं, जिसे बुद्धि द्वारा सिद्ध न किया जा सके। इस सम्बन्ध में खरगोश जैसे छोटे से प्राणी द्वारा अपने बुद्धिबल से बुद्धिहीन सिंह जैसे बलवान प्राणी को मार गिराना शारीरिक बल की अपेक्षा बुद्धि की महत्ता और विशिष्टता का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

करकट ने उत्साहपूर्वक कथा सुनने को कहा तो दमनक ने बुद्धिमान खरगोश की कहानी को शुरू किया—

बुद्धिमान खरगोश

किसी वन में भासुरक नामक एक सिंह रहता था। वह अपनी शक्ति के मद में बलहीन जानवरों पर जुल्म ढाया करता था। जीवों का प्रतिदिन मरना और अपनी संख्या को निरन्तर कम होती देख वन के बलहीन जीव बहुत दुखी थे। एक रोज उन सबने विचार-विमर्श कर अपने एक प्रतिनिधि को सिंह के पास भेजा। प्रतिनिधि ने सिंह से जाकर कहा कि जब उसे अपने पेट की भूख मिटाने के लिए एक ही प्राणी काफी है तो वह नाहक बहुत से जीवों का वध क्यों करता है। हम सभी ने यह विचार किया है कि यदि आप किसी प्राणी का वध न करने का आश्वासन दें तो हम प्रतिदिन एक पशु को आपके पास भेज दिया करेंगे। इससे आपको भी शिकार की खोज में भटकना नहीं पड़ेगा और हम भी सुख से रहेंगे।

सिंह ने प्रतिनिधि के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया, परन्तु यह चेतावनी भी दी कि यदि किसी दिन पशु नहीं आया तो मैं सभी को मार डालूँगा।

प्रतिनिधि सिंह को सभी प्रकार से आश्वस्त कर लौट आया। उस दिन से बारी-बारी हर रोज एक जानवर सिंह का आहार बनने के लिए जाने लगा।

कुछ दिनों उपरान्त एक बुद्धिमान खरगोश की बारी आई।

उसने सोचा—जब मरना ही है तो बेचैन होने और शीघ्रता करने का क्या लाभ है।

मंद गति से वह सिंह के निवास की तरफ जाने लगा। मन ही मन वह सिंह के विनाश के बारे में भी सोचने लगा।

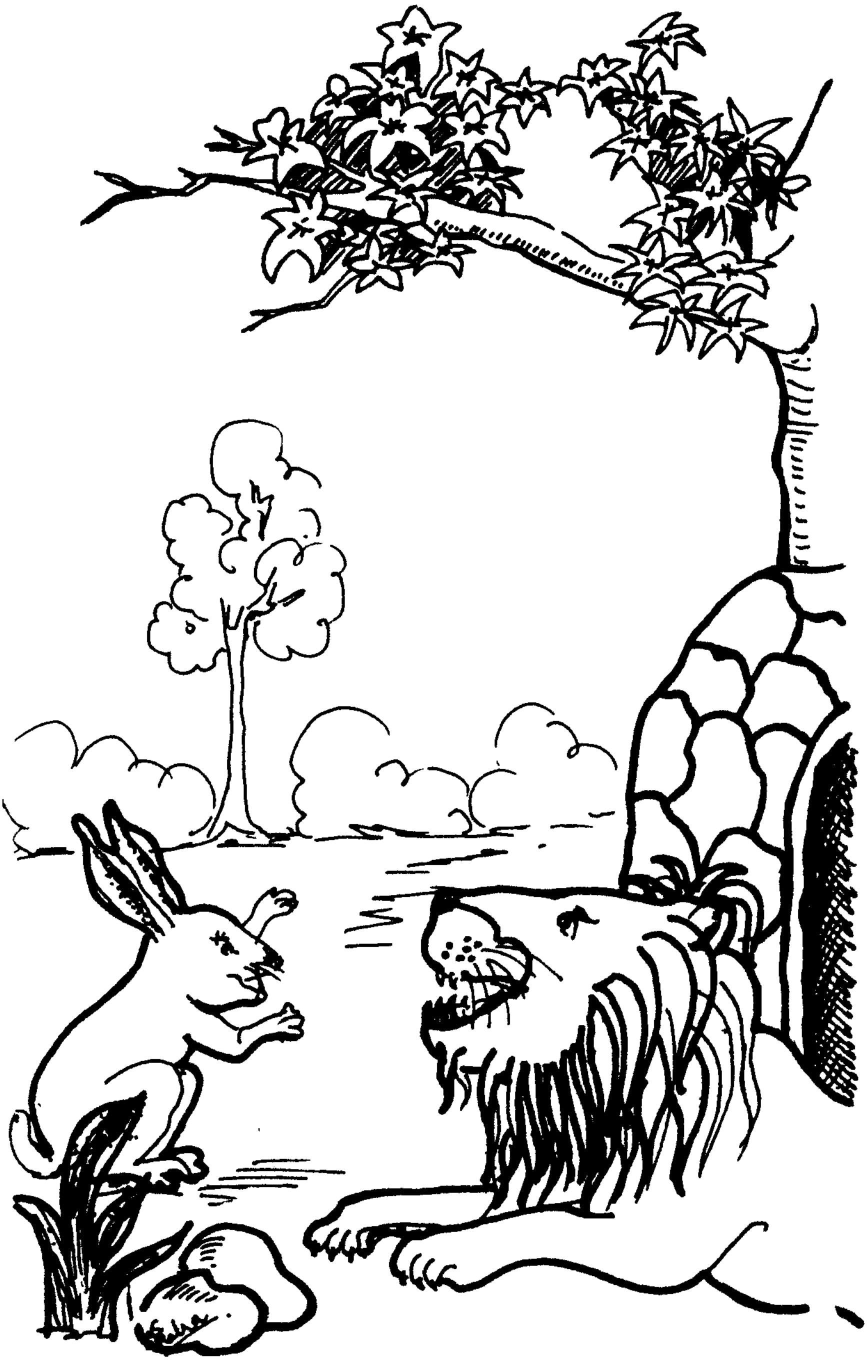
उधर सिंह भूख से व्याकुल होकर तड़फने लगा। गुस्से में वह और भी खूंखार लग रहा था।

आखिर, खरगोश ने उपाय सोच ही लिया। अपनी योजना को कार्यान्वित करने के लिए वह सायंकाल बहुत देर से सिंह के पास पहुँचा।

उसे देखते ही आग-बबूला होकर सिंह बोला—अरे दुष्ट! एक तो तुम इतने छोटे हो कि तुम्हें खाकर मेरी भूख नहीं बुझेगी, फिर तुम इतनी देर से आये हो। कल प्रातः मैं तुम्हारे जाति-बन्धुओं का विनाश कर उन्हें पाठ पढ़ाऊँगा।

खरगोश ने हाथ जोड़ विनम्र भाव से कहा—महाराज! देर से आने के लिए मैं दोषी नहीं हूँ। मैं तो सवेरा होते ही चल पड़ा था और ठीक समय पर आपका आहार बनने यहाँ पहुँच भी जाता परन्तु मुझे मार्ग में एक दूसरे सिंह ने घेर लिया। वह मुझे अपना आहार बनाना चाहता था। मैंने उसे समझाया कि मैं राजा भासुरक का भोजन हूँ, तुमने मुझे रोका तो वे तुम्हें छोड़ेंगे नहीं। वे बहुत शक्तिशाली और इस वन के स्वामी हैं। किन्तु महाराज! आपका नाम सुनकर तो वह दुष्ट और भी क्रुद्ध हो उठा और बोला—मैं किसी भासुरक को नहीं जानता। इस वन का स्वामी मैं हूँ। तुम्हें इसीलिए छोड़ता हूँ कि तुम अपने स्वामी से जाकर कह सको कि यदि वह मेरा सामना करने लायक है तो आये अन्यथा इस वन को छोड़कर चला जाये।

भासुरक यह सुनकर बौखला उठा और चीखकर खरगोश से



उसने कहा—चल, मुझे दिखा कि वह दुष्ट कहाँ है। मैं पहले उसकी खबर लूँगा और बाद में इत्मीनान से भोजन करूँगा।

खरगोश भासुरक को लेकर चल पड़ा। वह उसे एक कुएँ के पास ले आया और कुएँ की तरफ इशारा कर बोला—महाराज! आपका दुश्मन इस दुर्ग में ठहरा है, यहीं उससे मेरी मुलाकात हुई थी। नीचे झाँककर आप उसे स्वयं ही देख लें।

भूख और क्रोध से अन्धे एवं विवेकहीन भासुरक ने कुएँ में झाँका तो उसे पानी में अपनी परछाईं दिखाई दीं, जिसे वह दूसरा सिंह समझ बैठा। भासुरक जोर से गुर्राया तो उसकी प्रतिध्वनि लौटकर उसके कानों में पड़ी, जिसे उसने शत्रु की ललकार समझा। बस, फिर क्या था—भासुरक ने कुएँ में छलाँग लगा दी। सदा के लिए उसका नाम मिट गया।

वहाँ से लौटकर सभी जीवों को खरगोश ने जब बतलाया कि भासुरक मर चुका है तो सभी के चेहरों पर खुशी दौड़ गई। सभी ने खरगोश का खूब आदर-सम्मान किया और उसके बुद्धिबल की बढ़-चढ़कर प्रशंसा की।

इस कथा को सुनाकर दमनक बोला—हे करकट! इसी से मैं कहता हूँ कि बुद्धिमान ही सच्चे अर्थों में बलवान होता है। युक्ति में, अक्ल में कमाल की शक्ति होती है। जैसे एक गीदड़ ने हाथी को मार डाला।

तब करकट ने इस कथा को सुनाने का आग्रह किया। तो दमनक ने गीदड़ और हाथी की कथा सुनाई—

गीदड़ और हाथी

यह द्वापर युग के मध्य की बात है। एक बार जम्बू द्वीप के गीदड़ परेशान हो गए। उन्हें क्षुधातुर रोग हो गया। उन्हें हर समय भूख लगी रहती थी। कितना भी खा लें पर भूख थी कि शान्त नहीं होती थी। तब वे सब मिलकर लोमड़ी के पास पहुँचे। उन्होंने लोमड़ी को अपने रोग के बारे में बताया।

उस समय लोमड़ी की प्रतिष्ठा धन्वन्तरी वैद्य के समान थी। उसकी वैद्यगिरी की पूरे जंगल में प्रसिद्धि फैली हुई थी। गीदड़ों के पूछने पर उसने उनसे कहा—अगर तुम हाथी का गोश्त खाओ तो तुम्हारा यह रोग चला जाएगा।

यह सुनकर गीदड़ों ने अपनी बिरादरी की एक बड़ी सभा बुलाई। उसमें काफी सोच-विचार किया गया। उनमें से हरेक ने कहा—हम आकार में कुत्ते के समान छोटे हैं। हाथी एक बहुत बड़ा जानवर है। जंगल में उसके बराबर कोई नहीं है। हम छोटे जानवर उसे किस तरह मार सकते हैं?

सब चिन्ता में पड़ गए—जब तक हाथी का गोश्त खाने को नहीं मिलेगा उनका रोग दूर नहीं हो पाएगा और जब तक हाथी मरेगा नहीं उसका गोश्त खाने को नहीं मिल सकेगा। बडा ही गम्भीर मसला था।

गीदड़ों में एक गीदड़ बहुत बुद्धिमान था। वह चौंसठ विद्या

कला निधान था। उसने सभा में बोलते हुए कहा—भाइयो, फिक्र मत करो। यह काम बहुत आसान है।

बाकी गीदड़ों ने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा कि हाथी को मारना कैसे आसान है!

बुद्धिमान गीदड़ ने कहा—ज्ञान और विद्या का लाभ यह होता है कि वे मुश्किल काम को आसान बना देते हैं। यह बात सच है कि हाथी का शरीर बहुत बड़ा है परन्तु जहाँ तक प्राण की बात है, छोटी चींटी में भी उतना ही प्राण है जितना हाथी के शरीर में है। इसलिए विश्वास रखो कि सब कुछ सम्भव है। ज्ञान से तो परमेश्वर तक मिल जाता है। फिर हाथी तो एक पशु ही है। इसका मारना कुछ भी कठिन नहीं है।

बुद्धिमान गीदड़ ने अपने भाइयों को नीति की बात समझाई—धन और बल श्रेष्ठ हैं लेकिन युक्ति इन सबसे बड़ी है। युक्ति ही अष्ट सिद्धि है। अष्ट सिद्धि के वे अर्थ नहीं हैं जो अणिमा और महिमा में वर्णन किए जाते हैं बल्कि ये हैं कि तीनों लोकों और चारों दिशाओं में अपने मन के जितने कार्य हैं उनको पूर्ण करें। प्राणी अपनी इच्छा पूर्ण करने के लिए विचार करके उपाय करे तो कैसा ही कठिन कार्य हो उसमें अर्थ की सिद्धि अवश्य होती है। इसके विपरीत, जो प्राणी बगैर सोचे-समझे किसी काम को करता है वह अकाल मौत को प्राप्त होता है।

बुद्धिमान गीदड़ ने आगे दृष्टांत दिया—भाइयो, दरिन्दे चरिन्दों के मित्र नहीं हो सकते और कसाई बकरियों पर कभी दया नहीं कुता है। ज्ञानी उसको कहते हैं जिसको परमेश्वर का ज्ञान हो। परमेश्वर का ज्ञान उसको क्योंकर होगा जिसको जगत के तुच्छ व्यवहार का ज्ञान न होगा? इसलिए प्राणी को चाहिए कि जगत के सम्पूर्ण व्यवहार को यथा योग्य जानकर और फिर उसको मिथ्या समझकर

सच्चा आत्मज्ञान प्राप्त करे।

बुद्धिमान गीदड़ ने आगे उदाहरण देते हुए कहा—युक्ति में, अक्ल में, कमाल की शक्ति होती है। यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र से आश्चर्य के अनेक काम किए जा सकते हैं। हाथी अपने शरीर के डील-डौल का घमण्ड रखता है लेकिन वह मन का बहुत छोटा और कमजोर होता है। जो अहंकारी हो, अज्ञानी हो, और मन का कमजोर हो उसको मार देना मुश्किल काम नहीं है। इरान और तूरान के मुट्ठी भर चतुर लोगों ने अपनी चतुरुई के बल पर आर्यावर्त के करोड़ों कमजोर लोगों को मार-पीटकर लौंडी और गुलाम बनाया है। फिर वह हमारा जम्बू द्वीप तो इस भारत खण्ड में सबसे श्रेष्ठ है। यह हमारे पितामह का बसाया हुआ है। यूँ मानो कि हम ही तमाम आर्यावर्त्त के मालिक और गौरव हैं। तब क्या हम एक हाथी को भी नहीं मार सकेंगे?"

गीदड़ की यह बात सुनकर गीदड़ों की सभा में आशा और शक्ति का संचार हुआ। चौंसठ विद्या कला निधान गीदड़ ने एक नेता की तरह अगला दाहिना पाँव उठाकर कहा—पृथ्वी के सारे राजा शस्त्रों से युद्ध करते हैं लेकिन मैं एक मन्त्र के बल से हाथी का शिकार करूँगा। उसने अपनी बात जारी रखी—मुर्दे के मांस में दुर्गन्ध हो जाती है। इसलिए ऐ मेरे प्यारे सज्जन भाइयो, मैं तुम्हें जीवित हाथी का शिकार करके उसका गोश्त खिलाऊँगा।

उसने यह भी कहा कि तुममें से दो सज्जन भाई मेरे गुण की परीक्षा करने के लिए मेरे साथ चलें।

अब सारे गीदड़ों का मन प्रसन्न हो गया। सबने बुद्धिमान गीदड़ की स्तुति करते हुए कहा—इस जगत में तुम्हारे जैसा गुणी और विद्वान कोई दूसरा नहीं है। तुम अपनी जाति के दुःख-दर्द के

प्रति हमदर्दी रखते हो। हमारी जाति के दुःख दूर करने की तुममें ही सामर्थ्य है।

गीदड़ों की सभा खुशी-खुशी विसर्जित हुई। बुद्धिमान गीदड़ ने दो गीदड़ों को अपने साथ लिया। उसने अपने इष्ट देवता को मन-ही-मन याद किया। इसके बाद वह वन के भीतर चला गया। जाने से पहले वह अपनी जात-बिरादरी के गीदड़ों को समझा गया कि वे इतनी दूर खड़े रहें कि उसकी आवाज लगाने पर तत्काल वहाँ पहुँच सकें।

गीदड़ हाथी की खोज में आगे बढ़ने लगा। चलते-चलते उसे एक मस्त हाथी दीख पड़ा। हाथी बहुत बड़ा था और ऊँचे पेड़ के नीचे अपने अहंकार में खड़ा झूम रहा था। वह यह सोच-सोचकर खुश हो रहा था कि मेरे जैसा इस जगत में न कोई जानवर है और न कोई आदमी।

चौंसठ विद्या कला-निधान गीदड़ ने पहले हाथी के पास जाकर दुम हिलाते हुए अपने घुटने टेके। फिर उसने सिर झुकाकर उसकी दण्डवत की। उसके बाद उसने हाथी की महिमा गाते हुए उसकी इन शब्दों में स्तुति की—"महाराज, आपका स्वरूप ऐसा है जैसा वर्षाकाल का मेघ, आपका शरीर ऐसा स्थूल है जैसा हिमालय पहाड़ और आपके दाँत ऐसे हैं जैसे दिल्ली में कुतुब साहिब की लाट।

यह भूमिका बाँधकर उसने हाथी से हाथ जोड़ते हुए आगे कहा—महाराज, परमेश्वर आपको चिरंजीव रखे। वन के जानवरों ने बहुत आधीनता से यह प्रार्थना की है कि जैसे मनुष्यों में एक देश का राजा होता है वैसे ही हमारे लिए भी एक राजा का होना जरूरी है। वन में जो अन्य पशु हैं उन सबमें एक-एक अवगुण है। शेर हत्यारा है—मनुष्य और पशु सबका भक्षण करता है। बन्दर चंचल

है—पल-पल में उसके मन की इच्छा बदलती है। बैल का नाम ही बैल है। केवल तुम एक सर्वगुण सम्पन्न हो। इसलिए तुम राजगद्दी पर बैठो। हम तुम्हारी सेवा करेंगे और तुम हमारा एक राजा की तरह पालन करो।"

हाथी उसकी ये बातें सुनकर ऐसा खुश हुआ जैसे सन् 1857 में तिलंगों की बातें सुनकर दिल्ली वाला बहादुरशाह खुश हुआ था—और जैसे कीमिया साजों की हथफेरी देखकर कीमिया के चाहने वाले खुश होते हैं। हाथी अपनी एक पुरानी बात को याद करते हुए बोला—धन्य है, उस सकल गुण निधान पण्डित को धन्य है, जिसने छह महीने पहले मुझसे कहा था कि तुझे वन का राज्य मिलेगा और तेरी दुनिया में बड़ी प्रतिष्ठा होगी।

हाथी ने गीदड़ से गदगद स्वर में पूछा—राजा बनाने के लिए वन के रहने वाले जानवर, पशु-पक्षी यहाँ आएँगे कि मुझे कहीं चलना होगा।

चौंसठ विद्या कला निधान गीदड़ ने पुनः हाथ जोड़ते हुए कहा—वन में अनेक प्रकार के पशु हैं जो चौरासी लाख योनियों में हैं। उन सबके लिए यहाँ आना कठिन होगा। कोई धीरे-धीरे चलता है, कोई बूढ़ा है, कोई बच्चा है। फिर बैल शेर से डरता हुआ एक स्थान में छिपा बैठा है। इसलिए अगर कृपा करके आप ही चलें तो ज्यादा अच्छा है, अन्यथा जैसी आपकी आज्ञा हो, हम सेवक हैं, हमेशा आपके ताबेदार हैं।

यह सुनकर हाथी बहुत खुश हुआ। इस खुशी में वह ऐसा चिंघाड़ा मानो उसने मुबारकवादी की तोप चला दी हो। उसके मन की खुशी फटी पड़ रही थी। जैसे ठगों से मुसाफिर कहता है, उसने गीदड़ से कहा—राह बता।

चौंसठ विद्या कला निधान गीदड़ जंगल और पहाड़ की सैर

कराता हुआ और मेंढ़कों और पपीहों की बोलियाँ सुनवाता हुआ हाथी को वहाँ ले गया जहाँ बहुत दलदल थी। यह गीदड़ शरीर से हल्का था—इसलिए दलदल में अच्छी तरह चल सका। जब हाथी ने दलदल में पाँव रखा तो एक साथ कमर तक धँस गया।

इस हालत में वह आगे जाते गीदड़ से बोला—मैं दलदल में फँस रहा हूँ। ऐ चौंसठ विद्या कला निधान और पशुओं के भेजे हुए महापुरुष, कोई उपाय कर कि मैं इस दलदल से निकलकर आगे चल सकूँ।

चतुर गीदड़ ने कहा—महाराज की जय हो। मेरे कुटुम्ब के लोग निकट ही खड़े हैं। मैं उन सबको पुकारता हूँ। वे अभी आएँगे और आपकी दुम और सूंड को खींचकर आपको दलदल से बाहर निकाल देंगे। इस प्रकार योग माया की कृपा से आपके सब दुःख निवृत्त होंगे।

तब उसने अपने गीदड़ भाइयों को आवाज दी—भाइयो, चन्द्रमा का प्रकाश हो गया है। आओ, अपने व्रत का उपारण करो।

उसकी आवाज सुनते ही सारे गीदड़ ऐसे दौड़े जैसे हल्ले के वक्त फौज दौड़ती है। वे हाथी के चारों तरफ चिपटकर उसके मांस को नोंच-नोंचकर खाने लगे।

हाथी ने गीदड़ से कहा—ऐ गीदड़, यह तुमने मेरे साथ धोखा किया है।

इस पर गीदड़ ने जवाब दिया—जो कुछ मैंने किया है इसमें कुछ भी अनरीत नहीं है। दुनिया में परम्परा से यही व्यवहार चल रहा है।

इस कथा को सुनकर करकट बोला—हे दमनक तुम सही कह रहे हो परन्तु तुम इनको कैसे खत्म करोगे।

तब दमनक ने कहा—हे करकट! कूटनीति, भेदनीति से

अच्छे-अच्छे कार्य सफल होते हैं। मैं अभी संजीवक और पिंगलक के पास जाता हूँ और अपने बुद्धि कौशल से दोनों में फूट डलवाकर उनकी मित्रता भंग करवाता हूँ।

और वह अपने मित्र करकट से अनुमति लेकर पिंगलक के निवास की तरफ चल पड़ा।

पिंगलक एकान्त में अकेला बैठा था। दमनक ने आदरपूर्वक प्रणाम किया और चुपचाप पास में बैठ गया। पिंगलक ने कुशलक्षेम पूछा तो दमनक चेहरे पर गम्भीर भाव लाकर बोला—देव ! मैं तो कुशल से हूँ परन्तु मुझे आपकी चिन्ता खाये जा रही है। कुछ कहना चाहता हूँ किन्तु डरता हूँ कि कहीं आप विश्वास न करें।

दमनक के गम्भीर चेहरे को गौर से देखते हुए पिंगलक ने कहा—दमनक ! साफ-साफ कहो, यहाँ किसी प्रकार का भय नहीं है। तुम जो कहोगे, उसी से मालूम होगा कि बात मानने लायक है या नहीं।

दमनक कहने लगा—हे देव ! संजीवक आपके प्रति बैर रखता है और विद्रोह के लिए अवसर की ताक में है। मुझे अपना विश्वासी जानकर उसने आपके विरुद्ध षड्यन्त्र रचने को कहा है।

दमनक के वचनों को सुनते ही पिंगलक हक्का-बक्का रह गया। मानो उस पर भारी वज्रपात हुआ हो। स्थिति सँभलने पर दमनक से वह बोला—संजीवक जैसे विश्वासी सेवक से मैं ऐसे विश्वासघात की कल्पना स्वप्न में भी नहीं कर सकता। मैंने तो उसे अभयदान दिया है। सच तो यह है कि अपने हाथों बोये वृक्ष को काटने से भी दुःख होगा। मैंने ही उसे सींचा और मैं ही उसे उखाड़ूँ···· ? यह सब हुआ कैसे ?'

मन ही मन दमनक खुश हुआ और नीतिकारों के अनेक

उदाहरण देते हुए उसने संजीवक को और भड़का दिया। राजा से उसने कहा कि हे देव! घास-फूस खाने वाले संजीवक को मंत्री बनाकर आपने राजधर्म के विरुद्ध आचरण किया है, और यही एक गलती आपकी परेशानी का कारण बन गई है, आपके अनुजीवी आपको छोड़कर किसी दूसरे वन में जाने की सोच रहे हैं, क्योंकि उनका विश्वास है कि संजीवक के साथ रहकर आपमें धीरे-धीरे आखेट के प्रति रुचि धीमी पड़ती जायेगी और मांसाहार के बिना वीरता और साहस के कार्यों में सफलता सम्भव नहीं।

पिंगलक ने पूछा—तुम्हारे पास संजीवक की मेरे प्रति दुर्भावना का क्या प्रमाण है?

दमनक बोला—श्रीमन! उसने स्वयं मुझसे कहा कि वह कल प्रातःकाल आपका वध कर देगा। स्वयं कहे से बड़ा दूसरा प्रमाण हो ही क्या सकता है। कल प्रातःकाल जब वह आपके दर्शनों के बहाने आयेगा तो आप स्वयं देख लीजिएगा। क्रोध से उसका मुँह लाल होगा और आँखों से आग निकल रही होगी। होंठ फड़फड़ा रहे होंगे। वह चारों ओर सतर्क होकर देखेगा और फिर निश्चिन्त होकर न केवल अनुचित स्थान पर बैठेगा अपितु ऐसी नजर से देखेगा जैसे कि अभी आपको जलाकर राख कर देगा। आप जब ये सभी लक्षण देखें तो स्वयं मन में निर्णय ले लेना।

और इतना कह दमनक पिंगलक को प्रणाम कर चल पड़ा।

शातिर खिलाड़ी था दमनक। राजनीति को समझता था। दोनों को लड़ाने की मन में साध जो ली थी, सो—वह संजीवक के पास निराश.भाव लिए पहुँचा। चेहरे पर उदासी और धीमी चाल। संजीवक ने बड़ी ही आत्मीयता से उसका स्वागत किया। परन्तु उस धूर्त को तो अपनी बात कहने का माहौल बनाना था। सो, सेवा धर्म को मृतप्रायः बतलाता हुआ वह उपदेश झाड़ने लगा।

संजीवक उसकी उखड़ी-पुखड़ी बातों को सुन गम्भीर हो गया। उसने दमनक से इन बातों का कारण जानना चाहा।

गम्भीरता का अभिनय करते हुए दमनक बोला—सचिवों के लिए राजा की गुप्त योजना और रहस्य को खोलना उचित तो नहीं है, परन्तु क्योंकि आप मेरे कथन पर विश्वास करके राजकुल में आये हो, अतः आपकी रक्षा का दायित्व और अपना धर्म समझकर मैं एक अत्यन्त गुप्त रहस्य आपको बतलाता हूँ। पिंगलक तुम्हारे प्रति दुर्भावना रखता है। उसने मुझे एकान्त में बतलाया है कि कल प्रातःकाल वह तुम्हारी हत्या करके अपने परिजनों की क्षुधा को शान्त करेगा। मैंने पिंगलक को मित्र से द्रोह न करने का परामर्श दिया तो वह क्रुद्ध होकर बोला कि हम मांसभक्षियों और घासभक्षियों में कैसी मित्रता? हमारा तो एक-दूसरे से खास वैर है और सहज वैरी को मारने में कोई दोष नहीं होता। उसके अभिप्राय को जानकर मैं अपने कर्तव्य का पालन करने के लिए आपके पास आया हूँ। अब आपको जो उचित लगे, आप वैसा करने को स्वतन्त्र हैं।

यह सब कहकर दमनक चलने लगा तो दुःखी और चिन्तातुर संजीवक ने उसे आग्रहपूर्वक रोक लिया। संजीवक ने कहा कि यदि वह पिंगलक को प्रसन्न करने की चेष्टा करे तो क्या कोई लाभ हो सकता है?

दमनक बोला—तुम यदि चाहते हो तो प्रयत्न करके देख लो, हो सकता है कि पिंगलक तुम्हारी चाटुकारिता पर प्रसन्न हो जाये।

संजीवक सोच में पड़ गया। निराश होकर उसने कहा—दुष्टों के बीच सज्जन का निर्वाह हो ही नहीं सकता। दुष्ट जब इकट्ठे हो जाते हैं तो वे किसी न किसी बहाने सज्जन को मार ही डालते हैं। काक आदि क्षुद्र जीवों ने इकट्ठे होकर बेचारे ऊँट को मार डाला था।

दमनक की उत्सुकता पर संजीवक ने यह कथा सुनाई—

ऊँट और कव्वा

किसी वन में मदोत्कट नामक सिंह रहता था। उसके तीन सेवक थे। बाघ, गीदड़ और कव्वा। एक दिन सिंह ने अपने काफिले से बिछुड़े एक विचित्र जानवर को देखा। अनुचरों से उसने इसके विषय में पूछा तो कव्वा बोला—स्वामी! यह गाँव में रहने वाला कथलक नामक ऊँट है। यह आपका भोजन है। अपने काफिले से बिछुड़ जाने पर यह वन में भटक रहा है। आप इसे मार डालिए।

सिंह ने कहा—घर आये शत्रु को मारना भी उचित नहीं होता और यह तो शत्रु नहीं। हमारी शरण में आया एक निरीह सीधा-साधा पालतू पशु है। मैं इसका वध नहीं करूँगा। तुम इसे अभय कर यहाँ ले आओ।

अपने स्वामी की आज्ञा से तीनों सेवक ऊँट को आश्वस्त करके सिंह के पास ले आये। ऊँट ने आकर राजा को प्रणाम किया और अपने बिछुड़ने का सारा वृतान्त कह सुनाया। ऊँट की व्यथा-कथा को सुनकर सिंह ने उसे वन में निर्भय होकर रहने और हरी-भरी घास खाकर मस्त रहने का आदेश दे दिया। ऊँट गद्‌गद हो उठा और उसी वन में सिंह आदि पशुओं के साथ रहकर सुख से जीवन बिताने लगा।

संयोग ऐसा बना कि एक मदमत्त हाथी से मदोत्कट सिंह की भिड़न्त हो गई। सिंह इस भिड़न्त में इतना अधिक घायल हुआ कि

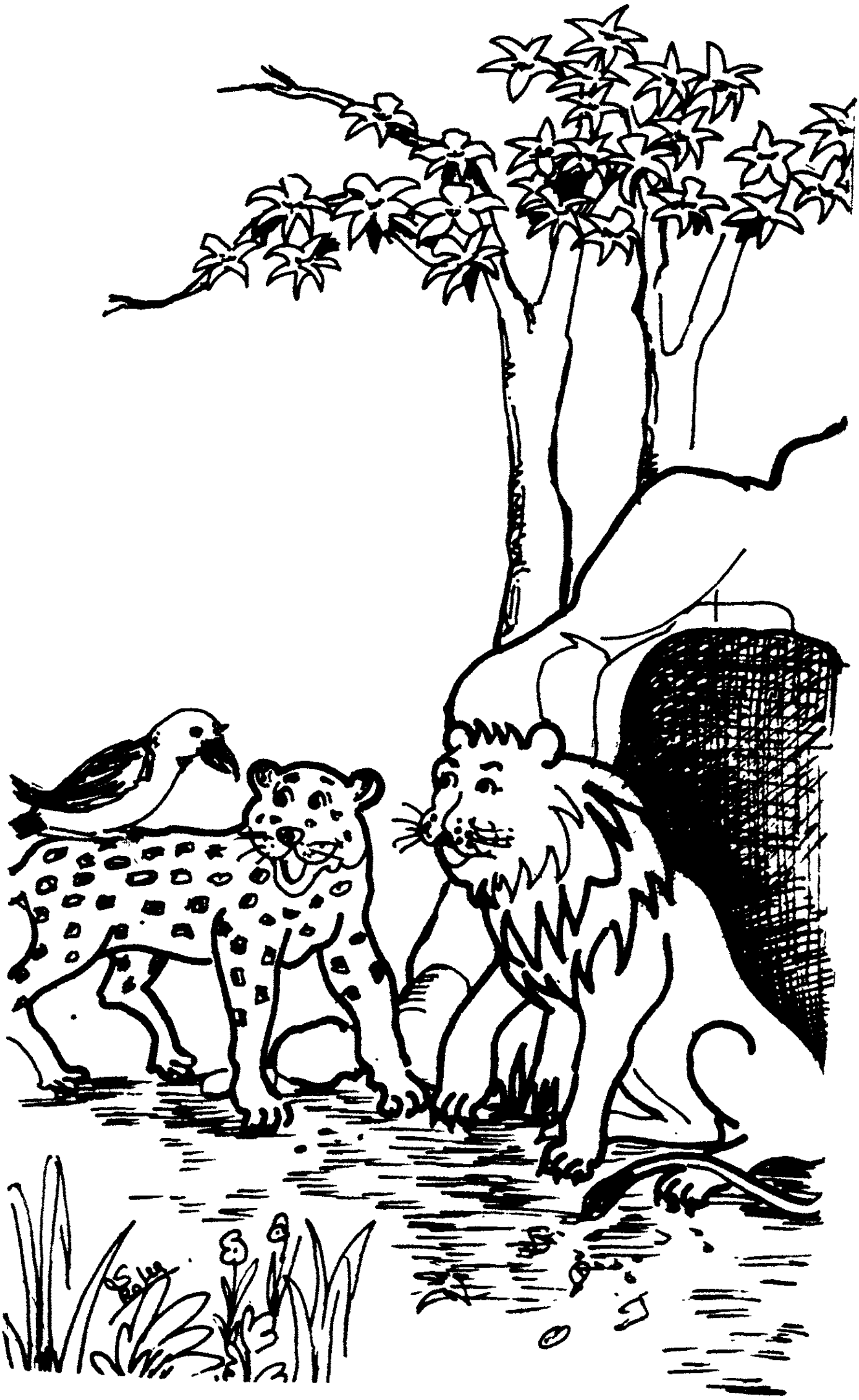
उसके लिए शिकार करना तो दूर, चलना-फिरना भी सम्भव न रहा। सिंह के अशक्त होने का परिणाम यह निकला कि सिंह और उसके सेवकों को भूखों मरने की नौबत आ गई। सिंह ने अपने सेवकों को किसी प्राणी की खोज करने को कहा। ताकि इस अशक्त अवस्था में वह उसका वध कर सके।

मदोत्कट सिंह की इच्छा को लिए—बाघ, गीदड़, कव्वा और ऊँट, उपयुक्त शिकार की खोज में निकले, परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। कव्वे और गीदड़ ने मिलकर विचार किया कि क्यों न ऊँट को ही अपना शिकार बनाया जाये। दोनों को यह विचार पसन्द आया परन्तु सिंह को इसके लिए सहमत करना आसान न था। कव्वे ने इस सम्बन्ध में सिंह से बातचीत करने का सुझाव दिया तो सभी चल पड़े। ऊँट उस समय उनके साथ न था।

सिंह के पास पहुँचकर उन्होंने कहा—स्वामिन ! सारा दिन भटकते रहने पर भी कोई शिकार हाथ नहीं लगा। हमारे लिए भूखे पेट चलना दूभर हो रहा है। हम आपको एक सुझाव दे सकते हैं, मानना न मानना आप पर है। हमारे विचार से जब तक आप स्वस्थ नहीं हो जाते, तब तक ऊँट का वध करके इसी के मांस से काम चलाइये।

सिंह ने यह सुना तो आग बबूला हो उठा और बोला—जिसे मैंने अभयदान दिया है, तुम उसी का वध करने का सुझाव दे रहे हो ? मैं इस अधम कार्य को कैसे कर सकता हूँ।

विनम्र स्वर में गीदड़ बोला—हे राजन ! पाप तो आपको तब लगेगा जब आप स्वयं उसका वध करेंगे। यदि वह ऊँट आपकी भूख और दुर्बलता को न सह पाने के कारण, आपके प्रति भक्तिभाव रखने के कारण स्वयं अपने आपको प्रस्तुत करे तो उसके वध में कोई दोष नहीं लगेगा। मुझे विश्वास है कि वह आपके



भोजन के लिए स्वयं को प्रस्तुत करने को उद्यत है। यदि हमारा कथन मिथ्या सिद्ध हो तो आप हमें प्राणदण्ड दे सकते हैं।

गीदड़ और कव्वे की बात सुनकर भूख से व्याकुल और घावों की पीड़ा से दुःखी सिंह बोला—जैसी तुम्हारी इच्छा हो करो, परन्तु यह निश्चित समझो कि यदि ऊँट ने अपनी सहमति न दिखाई तो मैं उसका वध नहीं करूँगा।

सिंह को आश्वस्त कर तीनों धूर्त ऊंट के पास आये। गम्भीर बन गीदड़ ने कहा—मित्रो! हमारे स्वामी की अवस्था बड़ी शोचनीय है। सारा दिन वन में भटकते रहने पर भी कोई शिकार हाथ न लगा। स्वामी का इस प्रकार भूखों मरना हमारे लिए लज्जा की बात है। आओ, हम सब स्वामी के लिए अपने-अपने प्राण न्यौछावर कर पुण्य के भागी बनें।

इस प्रकार ऊँट को झाँसे में लेकर सभी सिंह के पास पहुँचे। कव्वे ने गम्भीर भाव मुख पर लाकर सिंह से कहा—महाराज! हमारा भटकना तो सार्थक नहीं हुआ और आपकी भूख हमसे देखी नहीं जाती। आज, आप मुझे खाकर अपनी भूख मिटा लें। यह मेरे लिए पुण्य कर्म होगा।

कव्वे ने बात खत्म भी नहीं की थी कि गीदड़ ने कहा—आपकी भावना आदरणीय है, परन्तु आप जैसे छोटे से पक्षी से स्वामी की भूख शांत न होगी। इसलिए मैं अपने को प्रस्तुत करता हूँ। हे स्वामी! आज आप मुझे खाकर भूख को शान्त कीजिए।

गीदड़ की बात को सुनकर बाघ आगे आया। दोनों को पीछे धकेलते हुए उसने कहा—अरे! आप भी तो छोटे से ही हैं, स्वामी की भूख मुझे खाने से शान्त होगी। स्वामी से मेरा अनुरोध है कि वे मेरे प्राणों से अपनी भूख मिटायें, ताकि मेरा कल्याण हो।

तीनों की बातें सुनकर ऊँट कथलक ऊँट ने सोचा, इन तीनों ने तो अपने प्रस्तावों द्वारा अपनी स्वामीभक्ति का परिचय दे दिया है और स्वामी ने किसी के प्राण लिये भी नहीं हैं। यदि मैंने इनका अनुकरण नहीं किया, अर्थात् अपने आपको स्वामी के भोजन के लिए प्रस्तुत नहीं किया तो मेरी निष्ठा में सन्देह उत्पन्न हो जायेगा। अतः क्यों न मैं भी स्वामीभक्त होने का गौरव प्राप्त कर लूँ। यह सोचकर ऊँट ने बाघ को पीछे ढकेला और आगे बढ़कर सिंह से निवेदन किया—हे स्वामी! ये तीनों तो आपके लिए अभक्ष्य हैं। आज आप मेरे शरीर से ही अपनी क्षुधा शान्त करें। जिससे मैं आपके ऋण से उऋण होकर सद्गति प्राप्त कर सकूँ।

कथलक ऊँट के यह कहने की देर थी कि सिंह की आज्ञा से गीदड़, कव्वे और बाघ ने मिलकर तत्काल उसका पेट फाड़ डाला और सभी ने मिलकर भोजन किया।

संजीवक का अंत

इस कथा को सुनाकर संजीवक बोला—हे मित्र ! आपका राजा भी शूद्र सेवकों से घिरा हुआ है। मुझे लगता है कि या तो किसी दुष्ट ने मेरे विरुद्ध राजा के कान भर दिये हैं या फिर उसका स्वभाव ही घटिया है। अब आप ही मेरी सहायता करें।

दमनक बोला—मेरी राय में आप इस वन को छोड़कर कहीं और चले जाइये। पिंगलक बहुत ही नीच प्रवृत्ति का जीव है।'

संजीवक ने कुछ देर विचार किया और फिर दमनक से उसने कहा—समर्थ जीवों की भुजाएँ बड़ी विशाल होती हैं। दूर बैठे भी वे अपने शत्रु को दण्ड दिये बगैर नहीं रहते। इस विपत्ति का युद्ध ही एकमात्र विकल्प है। यदि मैं मर गया तो स्वर्ग की प्राप्ति होगी और यदि बच गया तो शेष जीवन सुख और शान्ति से बिताऊँगा।

युद्ध की बात को सुनकर दमनक सोच में पड़ गया। उसने सोचा कि कहीं यह अपने नुकीले सींगों से सिंह का वध न कर दे, अतः इसे यहाँ से भाग जाने की सलाह देना ही उत्तम है। उस धूर्त ने अनेक कथाओं का उदाहरण देते हुए संजीवक से युद्ध न करने की सलाह दी और यह भी कहा कि कभी-कभी शत्रु की शक्ति का गलत अनुमान लगाने अथवा उसे तुच्छ समझने का बहुत बुरा फल भुगतना पड़ता है।

मन में गम्भीर विचार करते हुए संजीवक ने उससे पूछा—मित्र ! मुझे कैसे ज्ञात होगा कि पिंगलक मुझ पर रुष्ट है और मेरा वध करना चाहता है ?

धूर्त दमनक ने जवाब दिया—यदि पिंगलक आपको देखकर भौंहें चढ़ाने, जीभ लपलपाने और आँखें तरेरने लगे तो उसे अपने प्रति रुष्ट समझ लेना।

और इस प्रकार उस धूर्त दमनक ने दोनों तरफ आग सुलगा दी। उसका मकसद पूर्ण हो चुका था। इधर संजीवक के मन में विचारों की आँधी उड़ रही थी तो उधर पिंगलक के दिल में झंझावाती थपेड़ों की टकराहट हो रही थी।

ऊपर से गम्भीर बना दमनक संजीवक से अनुमति लेकर अपने निवास की तरफ चल पड़ा। रास्ते में करकट मिला तो यह शुभ समाचार देना नहीं भूला कि संजीवक और पिंगलक में बैर पैठा दिया है। करकट से उसने कहा—मित्र ! मैंने भेदनीति का बीज डाल दिया है और मुझे विश्वास है कि वह अपना रंग अवश्य दिखलायेगा।

दो मित्रों में फूट डलवाने के लिए जब करकट ने दमनक की निन्दा की तो उस धूर्त ने नीतिशास्त्र का सहारा लिया। करकट से उसने कहा—अपने हृदय को कठोर और वाणी को मधुर बनाकर शत्रु को अपने जाल में फंसाना और मार डालना ही धर्म है।

दमनक के चले जाने पर संजीवक ने सोचा कि शाकाहारी होते हुए भी मैंने मांसाहारी से मित्रता करके अच्छा काम नहीं किया। फिर भी, कहीं और जाने से पूर्व एक बार पिंगलक से मिल लेना अच्छा है। इतने दिनों के सम्बन्ध को एक झटके से तोड़ना उचित नहीं।

पिंगलक के पास पहुंचकर संजीवक ने उसकी मुद्रा को दमनक द्वारा बताये अनुसार देखा तो घबराहट में बिना उसे प्रणाम किये ही दूर एक ओर बैठ गया। और जब पिंगलक ने संजीवक के आचरण को देखा तो उसे दमनक के कथन पर विश्वास हो गया। बस फिर क्या था—वह तत्काल संजीवक पर टूट पड़ा।

संजीवक ने भी आँखें तरेरीं और तीखे सींगों से पिंगलक के पेट पर चोट की। दोनों में घमासान युद्ध होने लगा। करकट ने दमनक से कहा—आपने इस प्रकार की स्थिति बनाकर ठीक नहीं किया। संजीवक के आघातों से यदि पिंगलक की मृत्यु हो गई तो आपको क्या मिलेगा। आप जैसे जीव पर विश्वास करके स्वामी ने भी अपनी मूर्खता का ही परिचय दिया है। पिंगलक के जीवित रहने पर आप मंत्री बन भी गये और जब कभी उसे आपकी असलियत मालूम हुई तो क्या आप बच सकेंगे? वस्तुतः मुझे तो लगता है कि आप जैसे कुटिल बुद्धि वाले जीव को उपदेश देना सर्वथा व्यर्थ है।

इधर दोनों में वाद-विवाद होता रहा और उधर पिंगलक से भिड़न्त के उपरान्त संजीवक घायल होकर गिर पड़ा और कुछ देर में ही छटपटाकर वह निर्जीव हो गया।

संजीवक के मर जाने पर पिंगलक उसके गुणों और आपसी मैत्री का स्मरण कर व्यथित हो उठा। तब, दमनक ने उसे नीति का पाठ पढ़ाया।

पिंगलक से उसने कहा—महाराज! आपका शोक आपकी कायरता का सूचक है। शाकाहारी संजीवक तो आपका भोजन था। फिर जब वह आपके प्राणों के लिए खतरा बन गया था तो उसे मारने में किसी दोष की सम्भावना का तो प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। महाराज! आप जरा सोचिए कि यदि राजा अपराधियों को

दण्ड नहीं देगा तो उसकी प्रतिष्ठा कहाँ होगी। बड़ा होने पर भी यदि कोई सीधा-सादा बना रहता है तो लोग उसकी उपेक्षा ही करते हैं।

दमनक द्वारा इस प्रकार समझाने पर पिंगलक का शोक जाता रहा। और फिर वह धूर्त मंत्री बनकर ऐश करने लगा।

किसी विद्वान ने सच कहा है कि धूर्त व्यक्ति की बातों में आना मूर्खता है। परिणाम आपके सामने है। धूर्त व्यक्ति फूट डालकर ही राज करते हैं।

•••